ऋग्वेद

ओ३म्

यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्यः ₹ 20

वर्ष : 31 चैत्र-बैशाख वि0स0 2075-76 अप्रैल 2019 अंक : 4

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून

वजनः 50 ग्राम

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद

अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

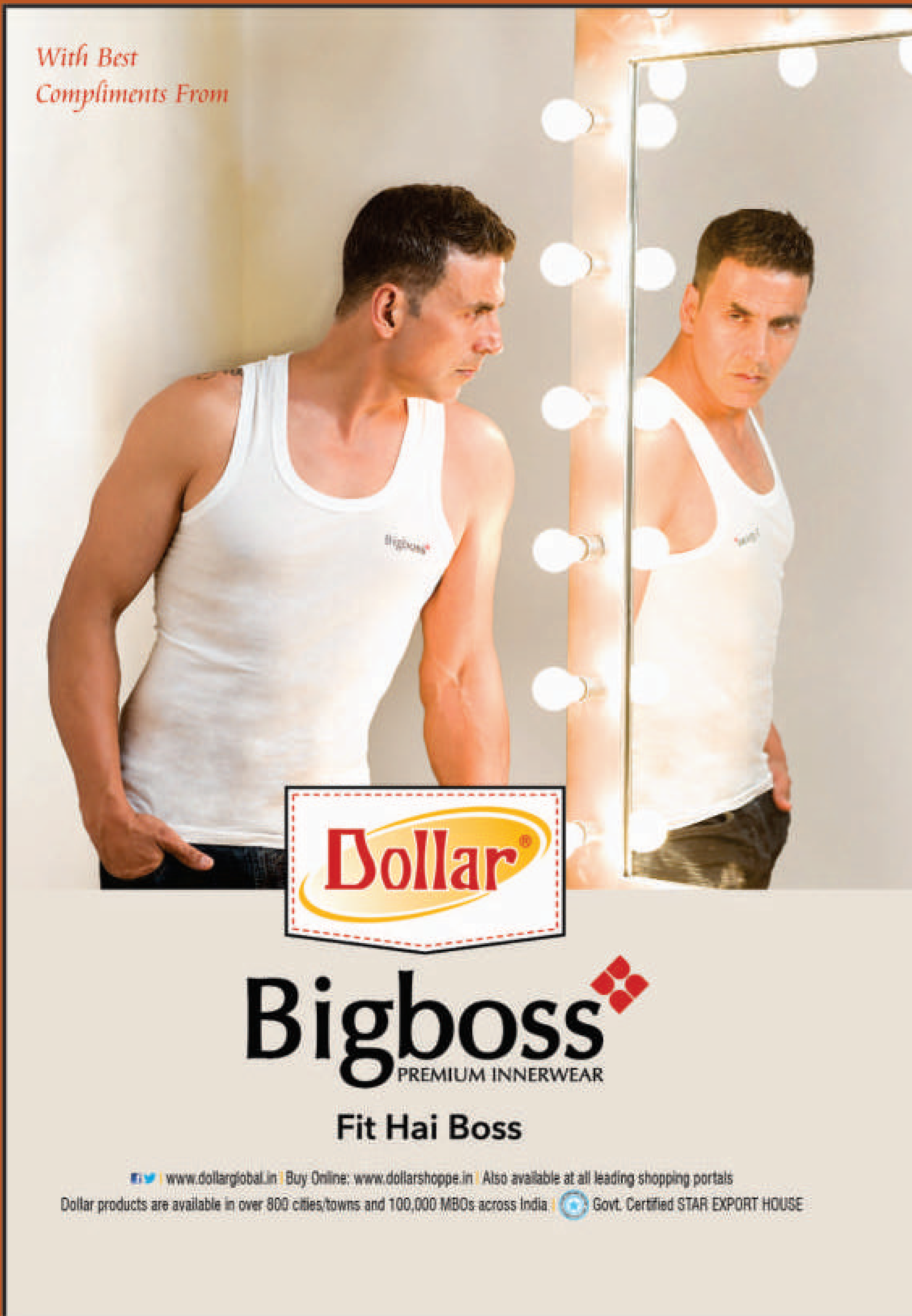

With Best
Compliments From
Dollar®
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

ओ३म्

पवमान

वर्ष–31 अंक–4

चैत्र–वैशाख 2075–2076 विक्रमी अप्रैल 2019

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,119 दयानन्दाब्द : 195

★

–: संरक्षक :–

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

–: अध्यक्ष :–

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

–: सम्पादक मण्डल :–

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

मोबाईल : 7310641586

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
वैदिक धर्म और उपासना	डॉ कृष्णकांत वैदिक	4
आर्य समाज वैदिक धर्म प्रचारक...	मनमोहन कुमार आर्य	7
श्री राम का प्रेरणादायक जीवन	मनमोहन कुमार आर्य	11
समुज्जवल रत्न डॉ. भवानीलाल भारतीय	डॉ० जयदत्त उप्रेती	14
योगेश्वर महाराज दयानन्द	प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु	17
भूपेन्द्र कुमार दत्त	स्वामी यतीश्वरानन्द जी	19
हनुमान की राम से भेंट	ईश्वरी प्रसाद प्रेम	22
आर्य समाज–एक चिंतन	आर्य रविन्द्र कुमार	24
महान क्षत्रिय योद्धा महाराणा सांगा	डॉ० विवेक आर्य	28
आहार–विहार का शरीर पर प्रभाव	डॉ० भगवान दाश	31
ग्रीष्मोत्सव मई 2019		32

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. ''वैदिक साधन आश्रम''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. ''पवमान''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. ''वैदिक साधन आश्रम''	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन''	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000 / – प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000 / – प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000 / – प्रति माह

पवमान पत्रिका के रेट्स

1. मासिक मूल्य (1 पत्रिका) — रु. 20 / – एक प्रति
2. वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष) — रु. 200 / – वार्षिक
3. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000 / –

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

प्रभु की उपासना कैसे करें

परमात्मा की उपासना के लिए विद्वानों द्वारा ज्ञान मार्ग, भक्ति मार्ग व कर्म मार्ग बताये गये हैं परन्तु एक साधारण साधक किस प्रकार उपासना करे कि वह प्रभु के निकटतम पहुंच सके इसके लिए शास्त्रों में कुछ सरल उपाय सुझाए गये हैं। इनमें सर्वप्रथम है अहिंसा । कहा गया है अहिंसा परमो धर्मः अर्थात अहिंसा परम धर्म है। मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी के प्रति वैर भाव न रखना व सभी प्राणियों से प्रेम की भावना रखना अहिंसा है। दूसरा उपाय है इन्द्रिय निग्रह जिसका अर्थ है मन को वश में रखते हुए विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध) में आसक्त न होना। चंचल इन्द्रियों को वश में करके जितेन्द्रिय बना जा सकता है। तीसरा मार्ग है – भूत दया अर्थात् प्राणि मात्र के प्रति दया भावना रखते हुए उनके दुःखों को दूर करने के लिए सदा प्रयास करना चाहिए। चौथा मार्ग है–क्षमा । कहा गया है–''क्षमा वीरस्य भूषणम्'' अर्थात् क्षमा वीरों की शोभा है। धर्म का दूसरा लक्षण क्षमा है। हमें क्षमा शील बनना चाहिए। पांचवा मार्ग है – ज्ञान । गीता में कहा गया है – 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमहि विद्यते' अर्थात् इस संसार में ज्ञान के समान मनुष्य को पवित्र करने वाला कोई अन्य साधन नहीं है। हमें अपने जीवन में ज्ञान की ज्योति जलाकर सत्य –असत्य, धर्म–अधर्म, पाप–पुण्य, कर्तव्य–अकर्तव्य का विवेक जागृत करना चाहिए। छठा मार्ग है–पवित्रता। पवित्रता या शौच दो प्रकार की होती हैं बाह्य और आन्तरिक। जल आदि से शरीर और वस्त्रों की तथा सत्य से मन की शुद्धि होती है। जीवात्मा ब्रह्मविद्या और तप से तथा बुद्धि ज्ञान से पवित्र होती है। सातवां मार्ग है– ध्यान जिसका अर्थ है मन का विषयों से रहित हो जाना । ध्यान की परिपक्व अवस्था का नाम समाधि है। हमें अष्टांग योग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान से समाधि में पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। आठवां मार्ग है–सत्य। कहा गया है ''नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्'' अर्थात् सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है और झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं है। सत्य स्वर्ग प्राप्ति की सीढ़ी है। अहिंसा से लेकर सत्य तक उक्त आठ मार्गों पर चलकर हम अपने जीवन को उत्कृष्ट बनाते हुए ईश्वर की सच्ची उपासना कर सकते हैं। वैदिक धर्म वेदों पर आधारित त्रैतवाद पर आधारित है और महर्षि दयानन्द ने त्रैतवाद को ही आधार मानते हुए आर्यसमाज की स्थापना की है। इस सिद्धान्त के अनुसार आत्मा और जीवात्मा सचेतन हैं और प्रकृति में कोई चेतना नहीं है। आर्यसमाज की मान्यता है कि परमेश्वर एक है। वह सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। हमें ऐसे परमेश्वर की उपासना करनी चाहिए।

आर्यसमाज में आडम्बर और अनेकदेव पूजा, मूर्तिपूजा और ढोंग का कोई स्थान नहीं है। परमात्मा के सच्चे स्वरूप को प्रदर्शित कराने वाले आर्यसमाज की स्थापना 10 अप्रैल सन् 1875 को हुई थी। आर्यसमाज के स्थापना दिवस पर सभी आर्यजनों को हम शुभकामनाएं अर्पित करते हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

वेदामृत

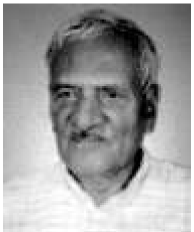

सरस्वती–वन्दना

उत ब्रुवन्तु नो निदो, निरन्यतश् चिदारत।
दधाना इन्द्र इद् दुवः।।

ऋग्वेद 1.4.5

ऋषिः मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः। देवता इन्द्रः। छन्दः गायत्री।

(उत) और यदि (नः) हमारे (निदः) निन्दक (ब्रुवन्तु) कहें [कि इस स्थान से तो निकल ही जाओ] (अन्यतः चित्) अन्य स्थानों से भी (निर् आरत) बाहर निकल जाओ [तो भी हम] (इन्द्रे इत्) परमैश्वर्यशाली परमेश्वर में ही (दुवः) पूजा को (दधानाः) धारण करने वाले [हों]।

हमने आज से ईश्वर–भक्ति का व्रत लिया है, हम परमैश्वर्यशाली इन्द्र–प्रभु के पुजारी हुए हैं। पर न जाने क्यों हमारी ईश्वर–पूजा को कुछ नास्तिक लोग पसन्द नहीं करते। वे चाहते हैं कि हम भी उन जैसे नास्तिक हो जायें, हम भी उनके दल में सम्मिलित होकर प्रभु की आज्ञा के विरुद्ध कार्य करें, चोरी करें, सज्जनों को धोखा दें, हिंसा–उपद्रव मचायें। हमारा प्रातः–सायं ध्यान में बैठना उन्हें नहीं रुचता। वे हम पर ताने कसते हैं। कहते हैं––तुम वंचक हो, तुम धूर्त हो, तुम यह दिखाना चाहते हो कि हम बड़े सन्त हैं, और इस प्रकार समाज को अपनी ओर आकृष्ट करके भोली जनता से अपना कार्य सिद्ध करना चाहते हो। उनके इन व्यंग्य–बाणों से विद्ध होकर हमारे कई साथी, जिन्होंने हमारे साथ प्रभु–पूजा का व्रत लिया था, पूजा छोड़ चुके हैं। पर, हे प्रभु! हमें तो तुम ऐसा बल दो कि हमारे निन्दक लोग हमारी कितनी ही निन्दा करें, हमें कितना ही डरायें–धमकायें, हमें कितना ही कष्ट दें, पर हम तुम्हारी पूजा न छोड़ें।

हम जानते हैं कि इस प्रकार निन्दकों की करतूतों को सहना आसान नहीं है। जब बहुत से निन्दक लोग मिलकर ताली पीटते हैं, फब्तियां कसते हैं, सामान जला देते हैं, तब भी सच्चाई पर अटल रहना विरलों का ही कार्य होता है। पर हमारी इच्छा यही है कि ऐसे समयों में भी हम प्रभु–पूजा में अटल रहें। यदि हमारे निन्दक लोग कहें कि तुम इस घर से निकल जाओ, इस गांव से निकल जाओ, इस नगर से निकल जाओ, देश से निकल जाओ, तो भी हम न घबरायें। कोई शत्रु हमारे शरीर से पत्थर बांधकर हमें समुद्र में फेंकने को तैयार हो जाए, आग में डालने को तत्पर हो जाए, पहाड़ की चोटी से गिराने को उद्यत हो जाए, तो भी हम ईश्वर–पूजा को न छोड़ें। हम ध्रुव और प्रह्लाद के समान ईश्वर–भक्त हों। हमारी ईश्वर–भक्ति को देखकर एक बार शत्रु भी हमारी प्रशंसा कर उठे, सामान्य मनुष्यों का तो कहना ही क्या है।

यदि हमारा ईश्वर–विश्वास ऐसा दृढ़ होगा तो प्रभु की कृपा हमें प्राप्त होगी। निन्दकों की निन्दाओं और शत्रुओं की बाधाओं की काली घटाएं स्वयं हमारे ऊपर से छंटती चलेंगी। परमैश्वर्यवान् इन्द्र–प्रभु हम पर अपने दिव्य ऐश्वर्यों की वर्षा करेंगे।

(डॉ० रामनाथ वेदालंकार कृत वेद–मंजरी से साभार)

वैदिक धर्म और उपासना

—डॉ कृष्णकांत वैदिक

ईश्वर में विश्वास के आधार पर ही धर्म की उत्पत्ति होती है। परमात्मा में विश्वास करना धर्म का आवश्यक अंग है। धर्म को स्वीकार करने से हमारे जीवन में परिवर्तन आ जाता है। ईश्वर में विश्वास रखने से हमें जीवन में लाभ मिलना चाहिए। ईश्वर में विश्वास रख कर उस से अपने जीवन को प्रभावित करने और इससे अपने जीवन के लिए लाभ उठाने का उपाय है—प्रभु की उपासना। सभी धर्मों में ईश्वर की उपासना का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हम ईश्वर की उपासना को समझने लग गए तो समझा जाता है कि हम धार्मिक हो गए हैं। प्रायः सभी धर्मों में प्रभु के गुणों का कीर्तन करना, परमेश्वर की महिमा को बताने और उसके गुणों की प्रशंसा करने वाले भजनों या मंत्रों का पाठ करना और बार—बार दोहराना परमेश्वर की उपासना करना समझा जाता है। इसके बाद प्रभु से प्रार्थना की जाती है कि वह सदा हम पर कृपा बरसाने वाले हों। साथ ही परमेश्वर से अपने लिए भी कृपा करने की प्रार्थना की जाती है। उससे प्रार्थना की जाती है कि वह भक्त के अमुक—अमुक कष्टों को दूर करे और उसे मनोवांछित फल प्राप्त कराए। यह समझा जाता है कि परमेश्वर अपनी प्रशंसा से हम पर प्रसन्न होकर हमारे कष्टों का निवारण कर देते हैं और हमारे कामों मे सफलता प्रदान कर देते हैं। ईश्वर में विश्वास रख कर उससे लाभ उठाने का प्रयास सभी धर्मों में स्वीकार किया जाता है। हम प्रशंसा और खुशामद को पसन्द करते हैं। हमारी यह कमजोरी है। यदि कोई हमारी प्रशंसा करे तो हम उससे प्रसन्न हो जाते हैं। उसे अच्छा समझने लगते हैं। हम उसके दोषों और अवगुणों पर ध्यान नहीं देते हैं और उसका पक्ष लेने लगते हैं। हम यह समझते हैं कि परमेश्वर हमारी प्रशंसा से प्रसन्न होकर हमारी रक्षा करेगा और हमारा पक्ष लेगा। हमने उपासना को व्यापार की वस्तु बना रखा है। हम यह समझते हैं कि हमें अपने दुःखों से छुटकारा पाने के लिए परमेश्वर की खुशामद करनी चाहिए। हम मन्दिर में जाकर भगवान् की मूर्ति के आगे नतमस्तक होकर प्रार्थना करते हैं और उसे प्रलोभन देते हैं कि यदि वह हमारा अमुक कार्य सफल कर देगा तो हम मन्दिर में एक निश्चित धनराशि का प्रसाद वितरित करेंगे या भगवान् के नाम से कोई कार्य करेंगे। इस प्रकार हमने भगवान् को एक सौदे या व्यापार की वस्तु बना रखा है। भगवान् अपनी प्रशंसा के भूखे नहीं हैं। वैदिक धर्म में परमात्मा को आप्तकाम और पूर्णकाम माना जाता है। परमात्मा में कोई ऐसी कामना नहीं है जो पूर्ण नहीं हुई है और जिसे उन्होंने पूर्ण करना है। उनकी सभी कामनाएं सदा से ही स्वभाव से ही पूर्ण हैं, इसी लिए वे अकाम हैं अर्थात् कामनाओं से रहित हैं। परमेश्वर को अपने लिए किसी भी वस्तु को प्राप्त नहीं करना है। वह धीर है। संसार के किसी भी प्रकार के परिवर्तन से उन्हें किसी प्रकार का विकार उत्पन्न नहीं होता है। वे सदा एकरस रहते हैं और अपनी समावस्था को नहीं खोते हैं। वे अमृत हैं अर्थात् मृत्यु से रहित हैं। वे स्वयंभू हैं— अपनी सत्ता का हेतु स्वयं ही हैं, उनकी सत्ता में और कोई कारण नहीं है। उन्हें किसी ने बनाया नहीं है और वे सदा से स्वयं ही चले आ रहे हैं। वे रस से अर्थात् आनन्द से परिपूर्ण हैं और सब प्रकार की कमियों से रहित

हैं। अकाम परमात्मा को अपने लिए किसी भी वस्तु की इच्छा और आवश्यकता नहीं है। उन्हें कुछ भी नहीं चाहिए।

कर्मफल भोग– वैदिक धर्म के अनुसार मनुष्य को अपने कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। हमारे शुभ कर्मों का फल सुख और अशुभ कर्मों का फल दुःख होता है। हम जैसा करेंगे, वैसा भरेंगे। अथर्ववेद (12–3–48) में कहा गया है– ''पक्तारं पक्वः पुनराविशाति'' अर्थात् मनुष्य जैसा पकाता है, वैसा ही प्राप्त होता है।

उपासना का प्रयोजन– संगति का जो लाभ है, वही लाभ उपासना का है। हमें ऐसी संगति कहां से प्राप्त हो सकती है, जो हमें सब प्रकार के दोषों से रहित करके पूर्ण पवित्रता की ओर ले जाने वाली हो। जो हमें पूर्ण रूप से सच्चरित्र बनाने में सहायता करती हो। ऐसी पवित्र करने वाली संगति हमें भगवान् की उपासना के द्वारा प्राप्त होती है। उपासना के समय उपासक परमेश्वर के गुणों का चिन्तन करता है और अपने मन द्वारा उसकी संगति में जा बैठता है। प्रभु की संगति का प्रभाव उपासक के चरित्र पर पड़ता है और परमेश्वर के गुण उसमें आने लगते हैं। वह भी परमेश्वर जैसा गुणशाली और पवित्र बनने लगता है। प्रभु की उपासना के समय उसकी संगति में बैठ कर उसके गुणों को धारण कर हम अपनी सब बुराइयों को छोड़ देते हैं और हम में कोई दोष शेष नहीं रहता है। हमारे अन्दर अब अच्छाइयां और सद्गुण आ जाते हैं। जब हमारे आचरण अशुभ नहीं रहे तो हमें दुःख कहा से मिलेगा?हमारे कर्म तो शुभ हो गए हैं। अब हमें सुख ही मिलेगा। सच्ची उपासना से हमारे कष्ट अवश्य कटते हैं, परन्तु पूर्व में किए हुए कर्मों का फल तो भोगना ही पड़ता है। इस समय के किए गए शुभ कर्मों का फल हमें आगामी जीवन में सुख के रूप में अथवा मोक्ष अवस्था के ब्रह्म–साक्षात्कार के आनन्द के रूप में मिलता है। उपासना हमारे भविष्य में होने वाले अशुभ कर्मों को काटती है। हमने प्रभु के गुणों को धारण नहीं किया तो उपासना का कोई लाभ नहीं है।

उपासना के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द के विचार–

परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना के सम्बन्ध में विचार करते हुए ऋषि दयानन्द ने वेद के कर्मफल–विषयक और उपासना–विषयक सिद्धान्तों के मर्म को ध्यान में रख कर सत्यार्थप्रकाश के सप्तम सम्मुलास में ये शब्द लिखे हैं– ''(प्रश्न) परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए या नहीं? (उत्तर)– करनी चाहिए। (प्रश्न)–क्या स्तुति आदि करने से ईश्वर अपना नियम छोड़ स्तुति–प्रार्थना करने वाले का पाप (पाप का फल) छुड़ा देगा?(उत्तर)– नहीं। (प्रश्न) तो फिर स्तुति–प्रार्थना क्यों करनी चाहिए? (उत्तर)– उन के करने का फल अन्य ही है। (प्रश्न)–क्या है?(उत्तर)– स्तुति से ईश्वर से प्रीति, उस के गुण–कर्म–स्वभाव से अपने गुण–कर्म–स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उस का साक्षात्कार होना।''

ईश्वर पूजा का वैदिक स्वरूप– महर्षि के अनुसार ''जो ज्ञानादि गुणवाले का यथायोग्य सत्कार करना है उसको पूजा कहते हैं।''

परमेश्वर की पूजा की क्या विधि हो सकती है? वेद कहता है कि परमात्मा आत्मिक, मानसिक, शारीरिक, सामाजिक आदि बलों का देने वाला है। इसी कारण से सकल देव एवं समस्त विश्व उसकी उपासना– पूजा–सेवा सत्कार, सम्मान करता है। पूजा का प्रकार क्या हो? उसकी आज्ञा के अनुसार चलना ही उसकी

पूजा है क्योंकि इसमें पूजक का भी कल्याण है। ईश्वर की आज्ञाओं के अनुकूल चलने में ईश्वर की पूजा है। ईश्वर पूजा का वैदिक स्वरूप परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना ओर उपासना करना है।

(१) **स्तुति**– महर्षि के अनुसार ''जो ईश्वर वा किसी दूसरे पदार्थ के गुण, ज्ञान, कथन, श्रवण और सत्य भाषण करना है वह स्तुति कहाती है।'' यथार्थ में जैसा ईश्वर है गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूपतः उसे वैसा ही जानना, सुनना–कहना और सुनना– सुनाना तथा सत्यभाषण करना ही स्तुति कहाती है। महर्षि सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं कि–

गुणेषु गुणारोपणं दोषेषु दोषारोपणमिति स्तुतिः।

गुणों में गुणों का आरोपण करना तथा दोषों में दोषों का अर्थात् जो जैसा है उसे वैसा ही जानना, सुनना, कहना ही स्तुति है।

(२) **प्रार्थना**– महर्षि के अनुसार ''अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिए परमेश्वर वा किसी सामर्थ्य वाले मनुष्य के सहाय लेने को प्रार्थना कहते हैं। जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है उसको वैसा ही प्रयत्न करना चाहिए अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करें, उसके लिए जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करें अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

(३) **उपासना**–महर्षि के अनुसार ''जिससे ईश्वर ही के आनन्द में अपने आत्मा को लगाना होता है उसको उपासना कहते हैं।'' उपासना शब्द दो शब्दों का संग्रह है–उप+आसन = उपासना। उप= समीप, आसन=स्थिति, बैठना, ठहरना, स्थित होना अथवा पास में होना। आध्यात्मिक जगत् में यह अर्थ ईश्वर के आनन्दस्वरूप में आत्मा को मग्न करने के अर्थ में रूढ हो गया है। महर्षि ने उपस्थान का अर्थ किया है–'' मैं परमात्मा के निकट और मेरे सन्निकट परमात्मा हैं। उपासना करने वाले का नाम उपासक और जिसकी उपासना की जाये वह उपास्य तथा जो की जाये उस प्रक्रिया का नाम उपासना है।

उपासना से लाभ– ईश्वर में विश्वास रखना धर्म का आवश्यक अंग है। उपासना से अनेक लाभ हैं, जिनमें कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं–

(1) जितनी देर हम उपासना में लगे रहते हैं, उतनी देर आनन्दमय और प्रसन्नता की अवस्था में रहते हैं। उस समय दुःख हमारे पास नहीं फटकते हैं। हमारे मन और शरीर में निराला उत्साह, फुर्तीलापन और चैतन्य होता है।

(2) हम प्रभु के गुणों का चिन्तन करते हैं। इससे हमारे अन्दर प्रभु जैसा बनने की इच्छा जाग उठती है। हम प्रभु के सत्य, न्याय, ज्ञान, बल, दया आदि गुणों को अपने अन्दर धारण करने लगते हैं।

(3) प्रभु के उक्त गुणों को धारण करके हम अपने आप को पवित्र बना लेते हैं। हम मानसिक और शारीरिक रूप से पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं।

(4) भक्ति का एक विशेष लाभ यह भी है कि प्रभु–भक्ति द्वारा पूर्ण पवित्र हुआ व्यक्ति जब इस शरीर को छोड़ता है तो वह पवित्रता के फलस्वरूप सीधा मुक्तावस्था में चला जाता है। उस अवस्था में वह प्रकृति के बन्धन से सर्वथा मुक्त होकर प्रभु का प्रत्यक्ष अनुभव करता है।

आर्य समाज वैदिक धर्म प्रचारक एवं समाज सुधारक संस्था है

—मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज ऋषि दयानन्द द्वारा चैत्र शुक्ल पंचमी तदनुसार 10 अप्रैल, सन् 1875 को मुम्बई में स्थापित एक धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रवादी एवं वैदिक राजधर्म की प्रचारक संस्था वा आन्दोलन है। ऋषि दयानन्द को आर्यसमाज की स्थापना इसलिए करनी पड़ी क्योंकि उनके समय में सृष्टि के आदिकाल में ईश्वर से प्रादुर्भूत सत्य सनातन वैदिक धर्म पराभव की ओर अग्रसर था। यदि ऋषि दयानन्द आर्यसमाज की स्थापना कर वेद प्रचार न करते और सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि एवं आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों की रचना न करते, तो सम्भव था कि वैदिक धर्म विलुप्त होकर इतिहास की एक स्मरणीय वस्तु बन जाता। महाभारत व ऋषि दयानन्द के जीवनकाल के मध्य ऐसा कोई मनुष्य नहीं हुआ जिसे वेदों का यथार्थ ज्ञान रहा हो। सच्चे योगी व ऋषित्व की परम्परा महाभारत के कुछ समय बाद जैमिनी ऋषि पर समाप्त हो चुकी थी। ऋषि दयानन्द के समय देश का वातावरण अत्यन्त निराशाजनक था। वैदिक धर्म को लोग भूल चुके थे। वैदिक धर्म अन्धविश्वासों, सामाजिक विषमताओं एवं कुरीतियों से युक्त था जिसका आधार अविद्यायुक्त मिथ्या ग्रन्थ यथा 18 पुराण, रामचरितमानस, प्रक्षिप्त मनुस्मृति, प्रक्षिप्त रामायण एवं महाभारत आदि ग्रन्थ थे। पुराण एवं रामचरित मानस अवतारवाद की वेद विरुद्ध मिथ्या मान्यता के पोषक थे व हैं। लगभग ढाई सहस्र वर्ष पूर्व बौद्ध एवं जैन मतों का प्रादुर्भाव हुआ जो नास्तिक मत थे। इन मतों के अनुयायी ईश्वर के अस्तित्व को नहीं मानते थे। यह अपने आचार्यों महात्मा बुद्ध एवं महावीर स्वामी के मत व मान्यताओं के अनुयायी थे व इन्हीं को ईश्वर के समकक्ष मानकर उनकी मूर्तियों की पूजा करते थे। मूर्तिपूजा का आरम्भ इन्हीं मतों से हुआ है। स्वामी शंकराचार्य ने इन मतों का खण्डन कर इनको पराजित किया और एक नये मत अद्वैतवाद व नवीन वेदान्त का प्रचार किया। यह मत वेदानुकूल न होकर ईश्वर के सर्वव्यापक वैदिक स्वरूप में स्थान–स्थान पर अविद्या की कल्पना कर उसे अविद्या से ग्रस्त बतातें हैं। वेदों के शीर्ष विद्वान व ऋषि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आचार्य शंकर के मत का युक्ति व प्रमाणों से खण्डन किया है। ऋषि दयानन्द के बाद स्वामी विद्यानन्द सरस्वती तथा पं. राजवीर शास्त्री सहित अनेक विद्वानों ने भी स्वामी शंकर के मत की समालोचना करते हुए उनके अद्वैतवाद के सिद्धान्तों को अवैदिक व अव्यवहारिक सिद्ध किया है।

स्वामी शंकर के बाद अनेक अवैदिक मत अस्तित्व में आये। विदेशों में भी ईसाई एवं इस्लाम मत का आविर्भाव हुआ। यह सभी मत वेद, उनकी शिक्षाओं व मान्यताओं से परिचित नहीं थे। इन सभी मतों में वेद विरुद्ध सहित ज्ञान–विज्ञान व युक्ति विरुद्ध मान्यतायें पाई जाती हैं। ऋषि दयानन्द ने इन सभी मतों का

अध्ययन किया और वैदिक मान्यताओं एवं सिद्धान्तों के आधार पर सभी मतों की तुलना करते हुए उनमें विद्यमान अविद्यायुक्त मान्यताओं का सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के चार समुल्लासों में उल्लेख किया है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि ऋषि दयानन्द ने वेदमत को सत्य, ज्ञान एवं विज्ञान से युक्त पाये जाने के कारण स्वीकार किया और इससे सभी मनुष्यों को लाभान्वित करने के लिये इसका देश–देशान्तर में अपने मौखिक प्रवचनों व ग्रन्थों के द्वारा प्रचार किया।

वैदिक धर्म में सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त ईश्वर, जीव व प्रकृति के यथार्थस्वरूप का ज्ञान है। चार वेद एवं वैदिक ऋषियों के ग्रन्थों में ईश्वर, जीव व प्रकृति का जो स्वरूप मिलता है वैसा संसार के किसी मत व पन्थ के ग्रन्थ में प्राप्त नहीं होता। हम ऋषि दयानन्द द्वारा आर्यसमाज के दूसरे नियम में वर्णित ईश्वर के स्वरूप का यथावत् उल्लेख कर रहे हैं। वह लिखते हैं ''ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी (ईश्वर) की उपासना करनी योग्य है।'' ईश्वर सर्वज्ञ है। वह जीवों को उनके कर्मों का सुख व दुःख रूपी फल अनेक जन्मों व योनियों में देकर उनका भोग कराता है। ईश्वर ही जीवात्मा को उसके कर्मानुसार जन्म व सुख–दुःख आदि भोगों की व्यवस्था करता है। ईश्वर मनुष्य की आत्मा सहित उसके हृदय एवं अंग–प्रत्यंग में व्यापक है। वह हमारी आत्मा में प्रेरणा भी करता है। मनुष्य जब ईश्वरोपासना, परोपकार अथवा कोई अच्छा काम करता है तो उसकी आत्मा में सुख, आनन्द व उत्साह उत्पन्न होता है और जब कोई बुरा काम करता व करने का विचार करता है तो उसकी आत्मा में भय, शंका व लज्जा आदि उत्पन्न होते हैं। यह आनन्द व सुख तथा भय, शंका व लज्जा आदि ईश्वर द्वारा अनुभव कराये जाते हैं। ईश्वर का स्वरूप जान लेने पर मनुष्य का कर्तव्य होता है कि सर्वोपकारी ईश्वर से हमें जो सुख व सुविधायें प्राप्त हुई हैं, उसका प्रतिदान हम उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना को करके करें। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो हम कृतघ्न होंगे। ऐसा न करने पर हम ईश्वर के आनन्द व अपनी आत्मा सहित ईश्वर के साक्षात्कार से भी वंचित रहेंगे। इस ईश्वर साक्षात्कार से मनुष्य को अनेक लाभ होते हैं। इससे धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्ष का अर्थ जन्म व मृत्यु के बन्धन से छूटना होता है। मोक्ष प्राप्त कर लेने पर मनुष्य कर्मानुसार मिलने वाले जन्मों से बहुत लम्बी अवधि के लिये मुक्त हो जाता है। जन्म नहीं होता तो मृत्यु भी नहीं होती। ऐसी अवस्था में जीवात्मा ईश्वर के सान्निध्य में रहकर ईश्वरीय आनन्द से युक्त रहता है जिसे किसी प्रकार का किंचित भी दुःख नहीं होता। यही मनुष्य वा जीवात्मा का लक्ष्य है। अनुमान कर सकते हैं कि हमारे ऋषियों व मुनियों को मोक्ष प्राप्त हुआ करता था। ऋषि दयानन्द में जो ज्ञान था तथा उन्होंने ईश्वरीय ज्ञान वेद के प्रचार के लिये जो पुरुषार्थ किया, उससे अनुमान होता है कि उन्हें भी मोक्ष की प्राप्ति हुई होगी। मोक्ष के स्वरूप व उसकी प्राप्ति की विधि को जानने के लिये सत्यार्थप्रकाश का नवम् समुल्लास पठनीय है। पूरा सत्यार्थप्रकाश पढ़कर मनुष्य मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में आगे बढ़ सकता है।

आर्यसमाज वेद विहित पंचमहायज्ञों की प्रचारक संस्था है। यह पंचमहायज्ञ हैं, सन्ध्या वा ईश्वरोपासना, दैनिक अग्निहोत्र, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ एवं बलिवैश्वदेव–यज्ञ। यह पांचों यज्ञ दैनन्दिन करने होते हैं। इसे करने से अनेक लाभ होते हैं। आर्यसमाज मत–मतान्तरों की अविद्यायुक्त असत्य मान्यताओं का खण्डन भी करती है। इसका कारण लोगों को असत्य व अज्ञानपूर्ण कार्यों को करने से रोकना एवं सत्यकर्मों सहित ईश्वर की उपासना में प्रवृत्त कर उन्हें पापों व उनके दुःखरूपी फलों व भोगों से बचाना है। आर्यसमाज समाज–सुधारक संस्था व आन्दोलन भी है। समाज में अनेक कुरीतियां एवं मिथ्या परम्परायें हैं जिन्हें दूर करना आवश्यक है। जड़–मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, बालविवाह, बेमेल विवाह, जन्मना–जातिवाद, ऊंच–नीच आदि भेदभाव को आर्यसमाज निषिद्ध बताती है। इसके स्थान पर वैदिक विधानों की महत्ता बताकर आर्यसमाज उन्हें आचरण में लाने का प्रचार करती है। मनुष्य का आचरण वेदानुकूल ही होना चाहिये तभी वह मनुष्य जीवन के उद्देश्य व लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। आर्यसमाज गुण–कर्म–स्वभाव पर आधारित वर्णव्यवस्था की पोषक है। आर्यसमाज की दृष्टि में न केवल मनुष्य अपितु सभी जीव योनियां परमात्मा की सन्तानें हैं। सभी योनियों के प्राणी हमारे भाई व बन्धु हैं तथा ईश्वर हम सब का माता व पिता है। उन सबके प्रति हमारे भीतर सद्भाव व उपकार की भावना होनी चाहिये। मांसाहार को आर्यसमाज मनुष्यों के लिये निषिद्ध सिद्ध करता है। मांसाहार बहुत बड़ा पाप है जिसका फल ईश्वर से महादुःख के रूप में प्राप्त होता है। मदिरापान भी मनुष्य व उसकी आत्मा की उन्नति में बाधक एवं हानिकारक है। आर्यसमाज ब्रह्मचर्य व्रत के पालन का भी पक्षधर है। वह भ्रष्टाचार व लोभ से युक्त परिग्रह की प्रवृत्ति को मनुष्य के पतन का कारण मानता है। आर्यसमाज वेद एवं ऋषियों के ग्रन्थों के स्वाध्याय को अधिक महत्व देता है जिससे मनुष्य की शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति होने के साथ अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि होती है। ऐसा मनुष्य विद्वान, निरोग, सुखी एवं दीर्घायु होता है।

आर्यसमाज वैदिक राजधर्म का प्रचार भी करती है। सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास का शीर्षक 'राजधर्म की व्याख्या' है। इस राजधर्म को ऋषि दयानन्द ने वेदों पर आधारित प्राचीन वेदानुकूल एवं उपादेय ग्रन्थ मनुस्मृति, शतपथ ब्राह्मण, शुक्रनीति, रामायण एवं महाभारत के आधार पर प्रस्तुत किया है। देश की स्वतन्त्रता के बाद आर्यसमाज का कर्तव्य था कि वह अपना राजनीतिक दल बनाकर सत्यार्थप्रकाश एवं राजधर्म विषयक वैदिक ग्रन्थों के आधार पर राजनीति में सक्रिय भाग लेता और देश की व्यवस्था को वेद व वैदिक ग्रन्थों के आधार पर चलाने के लिये पुरुषार्थ करता। आर्यसमाज ने इसकी उपेक्षा की जिस कारण देश में पाश्चात्य देशों मुख्यतः इग्लैण्ड आदि की व्यवस्था के अनुसार नियम बनाये गये। ऐसे अनेक नियम, विधान व व्यवस्थायें भी की गईं जिससे देश कमजोर हो रहा है। आर्यसमाज ने शिक्षा विषयक उत्तम विचार भी दिये हैं जिसका उल्लेख सत्यार्थप्रकाश के तीसरे सम्मुल्लास में मिलता है। आर्यसमाज गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली का पोषक है। इस प्रणाली में संस्कृत सहित कुछ अन्य भाषाओं एवं ज्ञान विज्ञान से संबंधित विषयों सहित आधुनिक चिकित्सा एवं अभियांत्रिक विद्या,

कम्प्यूटर आदि की समयानुकूल शिक्षा भी दी जा सकती है। विद्यार्थी जीवन में मनुष्य को धर्मशास्त्र भी अवश्य पढ़ना चाहिये तभी मनुष्य नैतिक गुणों को धारण कर व उनका आचरण कर सभ्य मनुष्य बन सकता है। वैदिक धर्मशास्त्रों की शिक्षा का अभाव मनुष्य को चारित्रिक पतन सहित भ्रष्टाचारी एवं नास्तिक बनाता है। यही कारण है कि आजकल शिक्षित व्यक्ति प्रायः नास्तिक होते हैं। वह ईश्वर व आत्मा के स्वरूप सहित मनुष्य के धार्मिक कर्तव्यों के प्रति विज्ञ व आचरणशील नहीं होते। आर्यसमाज एक राष्ट्रवादी संस्था भी है। वेद में पृथिवी को माता कहकर उसका स्तवन किया गया है। हमें अपने देश के लिये अपना सर्वस्व समर्पित करने की भावना से ओतप्रोत रहना चाहिये। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना भी वैदिक संस्कृति की देन है। 'सत्यमेव जयते' वैदिक संस्कृति का ही एक ध्येय वाक्य है। वैदिक धर्म सरलता का प्रतीक है। इसमें भड़कीले पहनावों वा वेषभूषा सहित अप्राकृतिक सौन्दर्य प्रसाधनों के प्रयोग की अनुमति नहीं है। यह बातें मनुष्य के व्यक्तित्व व जीवन की उन्नति में साधक न होकर बाधक होती हैं। संक्षेप में यही कहना है कि महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार, नास्तिकता को दूर कर आस्तिक जीवन का निर्माण करने, अविद्या को दूर कर विद्या की वृद्धि करने, असत्य, अन्याय व शोषण को दूर करने तथा मनुष्य का सर्वांगीण विकास करते हुए वैदिक धर्म एवं संस्कृति की रक्षा के लिये की थी जिसमें समाज सुधार भी मुख्य अंग व उद्देश्य था।

फार्म–4

प्रकाशन	:	पवमान
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
जिस स्थान पर मुद्रक का काम होता है उसका सही तथा ठीक विवरण	:	सरस्वती प्रेस, 2–ग्रीन पार्क, देहरादून
प्रकाशक का नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
प्रकाशक का पता	:	वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून
सम्पादक का नाम	:	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
क्या भारत का नागरिक है?	:	हाँ
सम्पादक का पता	:	166 ओल्ड नेहरू कॉलोनी, इलाहाबाद बैंक के पास देहरादून (उत्तराखण्ड)
उन व्यक्तियों के नाम, पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत के हिस्सेदार हों।	:	वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून

मैं कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
सम्पादक

दिनांक : 15–03–2019

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का आदर्श एवं प्रेरणादायक जीवन

—मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

आर्यावर्त वा भारतवर्ष में प्राचीन काल से अध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने का प्रभाव रहा है। सृष्टि के आरम्भ में ही ईश्वर ने चार ऋषियों के माध्यम से वेदों का ज्ञान दिया था। हमारे उन ऋषियों व उनके बाद आरम्भ ऋषि परम्परा ने इस ज्ञान को सुरक्षित रखा जिस कारण वर्तमान में भी वेद संहितायें वा वेदों का ज्ञान सर्वसाधारण के लिये सुलभ है। यह बात और है कि वेद ज्ञान से कोई लाभ उठाता है या नहीं। महाभारत काल के बाद वेदार्थ में अनेक प्रकार की विकृतियां आ गईं थी। इसके कारण ही समाज में भी विकृतियां फैल गईं और वैदिक धर्मी लोग धर्म के मर्म को भूल कर पाखण्डी और अन्धविश्वासी बन गये। इसके परिणामस्वरूप भारत में छोटे—छोटे राज्य व रिसायतें बनीं, सामाजिक विकृतियां उत्पन्न हुई तथा धर्म में सत्याचार के स्थान पर अज्ञान पर आधारित मिथ्याचार व स्वार्थ आदि की परम्पराओं में वृद्धि हुईं। ऐसे समय में बाल्मीकि रामायण में भी प्रक्षेप हुए। रामायण वा राम के सम्बन्ध में अनेक मिथ्या किम्वदन्तियां प्रचलित हुईं और अवतारवाद सम्बन्धी अनेक अविश्वसीय कथाओं को भी रामायण में जोड़ दिया गया। महात्मा बुद्ध के बाद भारत में पुराणों की रचना हुई जिसमें ज्ञान व विज्ञान की उपेक्षा कर अनेक अज्ञान से युक्त बातों का प्रचार हुआ। रामायण का प्रभाव भी भारतीयों में रहा। यवनों की पराधीनता के काल में तुलसीदास जी उत्पन्न हुए जिन्होंने लोक— भाषा वा हिन्दी में काव्यमय रामचरित मानस की रचना की। इससे पूर्व धर्म व मत सम्बन्धी ग्रन्थ संस्कृत भाषा में ही होते थे। राम—चरित— मानस के लोक भाषा में होने के कारण इसका जन—जन में प्रचार हुआ। इसका कारण मर्यादा पुरुषोत्तम राम का उज्जवल प्रेरणादायक चरित्र था। यदि कोई मनुष्य राम का जीवन चरित जान ले और उसके अनुसार आचरण करें तो वह मनुष्य जीवन में अनेक प्रकार की सफलताओं को प्राप्त कर सकता है। आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने सभी शास्त्रीय एवं इतिहास ग्रन्थों का अध्ययन किया था। उन्होंने पुराणों की परीक्षा भी की थी। ऋषि दयानन्द ने पाया कि रामचन्द्र जी का जीवन वैदिक मान्यताओं के आधार पर व्यतीत हुआ था। एक क्षत्रिय राजा व राजकुमार का वेदसम्मत जीवन जैसा होना चाहिये वैसा ही आदर्श एवं मर्यादा में बन्धा हआ जीवन दशरथनन्दन रामचन्द्र जी का था। अतः ऋषि दयानन्द ने वेदों को, जो ईश्वर प्रदत्त ज्ञान होने से अखिल—धर्म का मूल हैं, उसका प्रचार—प्रसार किया और साथ ही वेद की मान्यताओं पर आधारित सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों की रचना भी की। राम के जीवन में हम एक आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श राजा, आदर्श मित्र, आदर्श शत्रु, ईश्वर भक्त, वेदानुयायी, ब्रह्मचर्य के पालक, प्रजा पालक, भक्त वत्सल, आदर्श पति, तपस्वी, धर्म पालक, ऋषि व धर्म के रक्षक आदि अनेक रूपों व गुणों को पाते हैं। यदि हम रामचन्द्र जी के इन गुणों को अपने जीवन में धारण कर लें तो हमारा कल्याण हो सकता है। यही कारण था कि लाखों वर्ष पूर्व उत्पन्न राम व उनके रावण के साथ युद्ध आदि की घटनाओं पर आधारित बाल्मीकि रामायण व राम चरित मानस ग्रन्थों ने देशवासियों के हृदय पर अपनी अमिट छाप

बनाई। आज भी रामायण व इस पर आधारित अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं जिनका अध्ययन किया जाता है। रामचन्द्र जी के जीवन से वर्तमान समय में भी लोग अपनी घरेलू व राजनीति की समस्याओं के समाधान ढूंढने का प्रयत्न करते हैं। महर्षि दयानन्द ने बाल्मीकि रामायण को इतिहास का ग्रन्थ स्वीकार कर इसके विश्वसनीय, सृष्टिक्रम के अनुकूल तथा वेदानुकूल भाग का अध्ययन करने व कराने का विधान वैदिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में किया है।

आर्यसमाज में अनेक विद्वानों ने रामायण पर कार्य किया और उसका मन्थन कर उसका वेदानुकूल व विश्वसीय इतिहास सम्बन्धी भाग श्लोकों के हिन्दी अनुवाद सहित प्रस्तुत किया है। वर्तमान में आर्यसमाज में पं. आर्यमुनि, स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती तथा महात्मा प्रेमभिक्षु सहित बाल्मीकि रामायण पर कुछ अन्य विद्वानों के अनुवाद उपलब्ध हैं। इनमें सबसे अधिक प्रचारित स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती जी की रामायण है। हमारे पास यह सभी ग्रन्थ उपलब्ध हैं। हमने स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती जी की बाल्मीकि रामायण को आद्योपान्त पढ़ा है। यह ग्रन्थ सबके पढ़ने योग्य है। इसमें प्रक्षिप्त भाग को हटाकर रामायण को रोचक रूप में प्रस्तुत किया गया है जिसे पढ़ने से पाठक को दशरथ जी के पुत्र रामचन्द्र जी विषयक प्रायः पूर्ण इतिहास का ज्ञान होता है। यह ग्रन्थ यद्यपि एक वृहद ग्रन्थ है परन्तु गीता प्रेस की बाल्मीकि रामायण की तुलना में यह काफी छोटा है। इसे कुछ ही दिनों में पढ़ा जा सकता है। इसे पढ़ने से रामायण का ज्ञान हो जाता है जितना किसी मनुष्य के लिये आवश्यक है। हम अनुभव करते हैं कि प्रत्येक परिवार में यह ग्रन्थ होना चाहिये और सबको इसका तन्मयता से पाठ करना चाहिये।

रामचन्द्र जी की शिक्षा–दीक्षा ऋषियों के सान्निध्य में हुई थी जहां वेदाध्ययन सहित उन्हें क्षत्रिय धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। राम व लक्ष्मण ऋषियों के सान्निध्य में सन्ध्या व यज्ञ करते थे तथा अपने कर्तव्यों सहित शस्त्र संचालन एवं वेदज्ञान प्राप्त करते थे। रामायण के अनुसार रामचन्द्र जी का स्वरूप एवं व्यक्तित्व अत्यन्त सुन्दर, स्वस्थ, आकर्षक, प्रभावशाली एवं विद्या व सदाचार से परिपूर्ण था। वह माता, पिता तथा आचार्यों के आज्ञाकारी व सेवक तो थे ही, साथ ही अपने भाईयों के प्रति भी उनका व्यवहार वेद व शास्त्रों की मर्यादाओं के अनुसार था। प्रजा भी उनके व्यक्तित्व एवं व्यवहार से प्रभावित व उन पर मुग्ध थी। रामचन्द्र जी ऋषि विश्वामित्र के साथ वन में रहे और उनसे अध्ययन किया। वनों में ऋषियों के अनेक आश्रम थे जहां ऋषि–मुनि–विद्वान–वानप्रस्थी व संन्यासी वेदानुकूल जीवन व्यतीत करते हुए शोध, अनुसंधान एव शस्त्र विज्ञान सहित आयुद्ध निर्माण का कार्य किया करते थे। लंका का राजा रावण इन ऋषियों के कार्यों के प्रति आजकल के आतंकवादियों के स्वभाव वाला था तथा निर्दोष और ईश्वर भक्ति में निमग्न ऋषियों व उनके आश्रम में निवास करने वाले विद्यार्थियों पर अत्याचार करता था। बहुत से ऋषि व विद्वान इस कारण अकाल मृत्यु को प्राप्त होते थे। अतः रामचन्द्र जी ने ऋषियों को कष्ट देने वाले अनेक राक्षसों का वध किया। एक राजा व राजकुमार होने के कारण उन्हें अपराधी प्रवृत्ति के दुष्ट लोगों को दण्ड देने का पूर्ण अधिकार था।

रामचन्द्र जी ने गुरु विश्वामित्र जी के साथ राजा जनक की नगरी मिथिलापुरी में सीता के स्वयंवर में प्रवेश किया था और वहां एक प्राचीन भारी धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाते हुए उसे तोड़ डाला था। इस धनुष पर अन्य राजा प्रत्यंचा नहीं चढ़ा सके थे। यह राम की वीरता व पराक्रम का आरम्भ था। सीता से विवाह कर आप अयोध्या आये थे। कुछ दिन बाद आपके राज्याभिषेक का निर्णय आपके पिता दशरथ व मंत्री परिषद ने लिया था। पारिवारिक व देश की परिस्थितियों के कारण

आपको अगले ही दिन 14 वर्ष के लिये वन जाना पड़ा। बाल्मीकि रामायण ने इसका वर्णन करते हुए लिखा है 'आहूतस्याभिषेकाय विसृष्टस्य वनाय च। न मया लक्षितस्तस्य स्वल्पोऽप्याकारविभ्रमः।।' इसका अर्थ है कि 'राज्याभिषेकार्थ बुलाये हुए और वन के लिये विदा किए हुए रामचन्द्र के मुख के आकार में ऋषि बाल्मीकि जी ने कुछ भी अन्तर नहीं देखा।' कहां तो रामचन्द्र जी को राजा बनना था और कहां अगले ही दिन उन्हें सभी राजकीय सुख–सुविधाओं का त्याग कर 14 वर्ष के लिए वन जाने को कहा गया। इस पर भी वह इन घटनाओं से किंचित विचलित हुए बिना पिता की आज्ञा पालन करने के लिए सहर्ष वन जाने के लिये तैयार हो गये। विश्व के इतिहास में ऐसी घटना दूसरी नहीं है। आज राजनीति का स्तर कितना गिर गया है जिसे सभी राजनीतिक नेताओं व उनके अनुचरों के दिन प्रतिदिन के बयानों से देखा व जाना जा सकता है। वह देश के हितों की उपेक्षा करने से भी गुरेज नहीं करते। दूसरी ओर राजा बनाने की घोषणा सुनकर भी राम के चेहरे पर प्रसन्नता का भाव नहीं देखा गया और वन जाने के लिये कहने पर भी उनके मुख पर किसी प्रकार के दुःख या चिन्ता के भाव नहीं थे। यह स्थिति एक बहुत उच्च कोटि के योग साधक वा ईश्वर भक्त की ही हो सकती है। इससे रामचन्द्र जी के व्यक्तित्व का अनुमान लगाया जा सकता है जो कि आदर्श रूप है। इससे शिक्षा लेकर हम भी सुख व दुःख की स्थिति में स्वयं को समभाव वाला बनाकर अपने जीवन को ऊंचा उठा सकते हैं। रामचन्द्र जी के गुणों का वर्णन करते हुए आर्य विद्वान श्री भवानी प्रसाद जी ने लिखा है 'वस्तुतः दशरथनन्दन राम स्वकुलदीपक, मातृमोदवर्द्धक तथा पितृनिर्देशपालक पुत्र, एकपत्नीव्रतनिरत पति, प्राणप्रियाभार्यासखा, सुहृददुःखविमोचक, मित्र, लोकसंग्राहक, प्रजापालक नरेश, सन्तानवत्सलपिता और संसार मर्यादा–व्यवस्थापक, परोपकारक, पुरुषरत्न का एकत्र एकीकृत सन्निवेश, सूर्यवंश प्रभाकर, कौशल्योल्लासकारक, दशरथानन्दवर्धन, जानकी जीवन, सुग्रीवसुहृद्, अखिलार्यनिशेवितपादपद्म, साकेताधीश्वर, महाराजाधिराज आदि गुणों से युक्त थे।' यह सभी गुण अन्य कहीं किसी मानव में मिलना दुर्लभ है।

रामायण के सुग्रीव–हनुमान मित्रता, बालीवध, सुग्रीव को राजा बनाना, बाली के पुत्र अंगद को अपने साथ रखना, प्राणपण से ऋषि–मुनियों की रक्षा तथा राक्षसों का नाश करना, अपने दूत भेजकर रावण को समझाना और सीता को लौटाने का सन्देश देना, रावण के भाई विभीषण को शरण देना और रावण के वध के बाद उन्हीं को लंका का राजा बनाना, 14 वर्ष बाद अयोध्या लौटकर भरत के आग्रह पर राजा बनना और अपनी तीनों माताओं को समानरूप से सम्मान देना, एक आदर्श राजा व पिता के रूप में प्रजा का पालन करना रामचन्द्र जी को एक आदर्श मनुष्य व पुरुषोत्तम बनाते हैं। इस तरह का मनुष्य बनना हमारे जीवन का उद्देश्य भी है। इसी कारण मध्यकालीन अल्पज्ञानी लोगों ने वेदों से अनभिज्ञ होने के कारण उन्हें परमात्मा के समान पूजनीय स्वीकार किया और आज तक भी उनका यश कायम है। करोड़ो लोग उनके जीवन से प्रेरणा लेते आये हैं व अब भी ले रहे हैं। यदि इतिहास में उपलब्ध सभी जन्म लेने वाले महापुरुषों के जीवन पर दृष्टि डालें तो रामचन्द्र जी के जैसा महापुरुष विश्व इतिहास में दूसरा उपलब्ध नहीं होता। आज भी रामचन्द्र जी का जीवन प्रासंगिक एवं प्रेरणादायक है। हमें बाल्मीकि रामायण का अध्ययन करने के साथ रामचन्द्र जी के गुणों को अपने जीवन में धारण करने का प्रयास करना चाहिये। इसी से हमारा जीवन सार्थक होगा। रामनवमी रामचन्द्र जी का जन्म दिवस है। इस दिन हमें उनके जीवन पर किसी वैदिक विद्वान की कथा व प्रवचन सुनना चाहिये और उससे लाभ उठाना चाहिये।

आर्यसमाज की विद्वत परम्परा के समुज्जवल रत्न डॉ. भवानीलाल भारतीय

–डॉ० जयदत्त उप्रेती

महान् वेदादि शास्त्रज्ञ, देशभक्त एवं समाजोद्धारक स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा संस्थापित आर्यसमाज तथा परोपकारिणी सभा, यह दो संस्थायें आज भी सजीवता के साथ देश–विदेश में सनातन वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार और वैदिक सिद्धान्तों पर निरन्तर साहित्य की रचनाओं के द्वारा प्रशस्त कार्य कर रही हैं। महान् ऋषिभक्त पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी दर्शनानन्द और महात्मा नारायण स्वामी जी से लेकर डॉ. भवानीलाल भारतीय जी, आचार्य एवं अध्यक्ष, दयानन्द अनुसंधान पीठ, पंजाब विश्व विद्यालय, चण्डीगढ़ तक शताधिक विद्वान् लेखक, उपदेशक, शास्त्रार्थ–महारथी और भजनोपदेशक आर्यसमाज में विगत सवा सौ वर्षों के भीतर विश्व में प्रचारित किये हैं। वर्तमान में भी अनेक विद्वान् वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में यत्नशील हैं। डॉ. भारतीय जी ने 1991 ई० में आर्य लेखक कोष लिखकर प्रकाशित किया, जिसमें 1172 आर्यसमाज के विद्वान् लेखकों, उपदेशकों, कवियों, शास्त्रार्थकर्ताओं आदि के परिचयों और विवरणों का सुन्दर संग्रह किया गया है। यह आर्यसमाज की विद्वत्परम्परा को जानने के लिए अतीव महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कृति है। इस ग्रन्थ के आरम्भ में पुरोवाक् नाम से जो भूमिका भारतीय जी ने लिखी है, उसमें इस संग्रह हेतु उनके महान् परिश्रम और आर्यसमाज के प्रति समर्पण की भावनाओं को देखा जा सकता है। आर्यसमाज के प्रति उनकी निष्ठा और लगन भी देखी जा सकती है। इसी प्रकार का उनके द्वारा विरचित एक अन्य पृथुकाय ग्रन्थ– ''नव जागरण के पुरोधा– स्वामी दयानन्द सरस्वती'' भी है, जो ऋषि दयानन्द निर्वाण शताब्दी 1984 ई० में प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त डॉ० भारतीय जी के अनेक छोटी–बड़ी पुस्तकों की एक बड़ी सूची है, जिसको वैदिक पथ (मासिक, हिण्डोन सिटी) के चार मास पूर्व के अंकों में डॉ० ज्वलन्त कुमार शास्त्री जी के सम्पादकीय लेख में देखा जा सकता है। लगभग 70–80 पुस्तकों और डेढ़ हजार लेखों के रचनाकार के रूप में भारतीय जी आर्यसमाज के इतिहास की एक विभूति के रूप में चिरकाल तक यशःशरीर से जीवित रहेंगे। कहा भी गया है, ''कीर्तिरक्षरसम्बद्धा चिरं तिष्ठति भूतले''।

डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार द्वारा सात भागों में जो आर्यसमाज का इतिहास प्रकाशित किया गया है, उसके अनेक भागों की रचना में भी डॉ० भवानीलाल भारतीय जी का महत्वपूर्ण योगदान और सहयोग रहा है। इसी प्रकार यदि कहा जाये कि भारतीय जी की लेखनी का कोई भी ग्रन्थ आर्यसमाज और वैदिक धर्म के परिचय से विलग नहीं है, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति

न होगी। (वर्तमान विद्वान् आर्य लेखकों में आर्यसमाज के इतिहास के बारे में इसी प्रकार के जानकार प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी भी देखे जा सकते हैं।)

मेरा डॉ. भवानीलाल भारतीय जी से, उनके आर्य पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों से, यों तो 1960 के दशक से नामतः परिचय होता रहा किन्तु जब 1968 ई0 में उनकी पी–एच०डी० शोध–प्रबन्ध वाली पुस्तक ''ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन'' प्रकाशित हुई, और उन्होंने उस पुस्तक की एक प्रति मुझे भेजी तब से शनैः शनैः उनसे मैत्री एवं परिचय बढ़ता गया और तदनन्तर अनेक बार आर्य–सम्मेलनों आदि में उनसे प्रत्यक्ष मिलने का मुझे सौभाग्य हुआ। उनकी विद्वत्ता, शालीनता, वक्तृता, व्यवहार–कुशलता तथा विनम्रता उन्हें सबका प्रिय मित्र बना लेती थी। वस्तुतः उक्त पुस्तक के पृष्ठ 128–129 पर मेरी 'सिद्धान्त शतकम्' शीर्षक से वैदिक सिद्धान्तों पर श्लोकबद्ध रचना, जो कि गुरुकुल–पत्रिका के 2021 विक्रमी श्रावण, आश्विन के अंकों में धारावाहिक रूप से छपी थी, उसका सटीक संक्षिप्त उल्लेख किया गया था। इस कारण भारतीय जी ने ससम्मान अपनी पुस्तक को मेरे पास भेजा था। इससे अपना लेखन कार्य आगे बढ़ाने के लिए मैं प्रोत्साहित तो हुआ ही, साथ ही एतदर्थ साभार भारतीय जी को धन्यवाद दिया। बाद में यह 'सिद्धान्त–शतकम्' पुस्तक महामहोपाध्याय पं० युधिष्ठिर मीमांसक एवं विद्यावारिधि आचार्य विजयपाल जी के प्रकाशकीय वक्तव्य के साथ संस्कृत–हिन्दी व्याख्या सहित श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ से प्रकाशित हुई।

डॉ० भवानीलाल भारतीय एवं स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती के सम्मिलित प्रयासों से 1990–91 ई० के आस–पास आर्य लेखक परिषद् का राजस्थान के औद्योगिक नगर कोटा में गठन किया गया। इसके अध्यक्ष डॉ० भवानीलाल भारतीय जी चुने गये। उप प्रधान दो लेखक थे। मन्त्री श्री वेदप्रिय शास्त्री और कोषाध्यक्ष डॉ० रामकृष्ण आर्य हुए। कार्यकारिणी में डॉ० ज्वलन्त कुमार शास्त्री, डॉ० रघुवीर वेदालंकार और इन पंक्तियों के लेखक सहित डॉ० कुशलदेव शास्त्री, आदि 5–7 लेखक थे। सबके नाम इस समय स्मरण नहीं आ रहे हैं। परिषद के प्रत्येक सदस्य से सदस्यता का शुल्क अढ़ाई सौ रुपये मात्र आजीवन भर के लिए नियत किये गये। दो–तीन वर्षों के भीतर आर्य लेखक परिषद् की सदस्य संख्या ढाई सौ से ऊपर चली गई और वर्ष में एक या दो बार विशेष सम्मेलनों और बैठकों का आयोजन भी होता रहा। इसी बीच ''आर्यसमाज प्रहरी'' नाम से एक मासिक पंत्रिका भी प्रकाशित होने लगी जिसमें परिषद् के लेखकों के लेख छपा करते थे। इस पत्रिका के सम्पादक श्री आदित्य मुनि जी (पूर्व सम्पादक, आर्यसेवक) को नियुक्त किया गया। आरम्भ में पत्रिका आर्य सिद्धान्तों पर अच्छे लेख छापती रही किन्तु कुछ काल पश्चात् श्री आदित्य मुनि (पूर्व नाम आदित्यपाल सिंह) जी अपने सम्पादकीय लेखों में वेदों को अपौरुषेय न मानकर विभिन्न ऋषियों की और ऋषि दयानन्द की मान्यता के विपरीत पौरुषेय ग्रन्थ के रूप में दर्शाने लगे। यह उनकी मान्यता ई० उपेन्द्रराव जी जो भोपाल में अभियन्त्रण विभाग में उनके सह अधिकारी रहे, उनके प्रभाववश परिवर्तित हुई, ऐसा लगता है। अस्तु, इस

मान्यता का अधिकांश परिषद के सदस्यों के द्वारा प्रबल विरोध हुआ। फलतः आर्यसमाज प्रहरी पत्रिका छपना बन्द हो गई।

आर्य लेखक परिषद् का लेखा जोखा समर्पित कार्यकर्त्ता मुख्यतः श्रीवरुण मुनि जी (पूर्व नाम डॉ. रामकृष्ण आर्य) और श्री वेदप्रिय शास्त्री जी लगभग दस वर्षों तक सम्हालते रहे। सन् 1993 में आर्य लेखक परिषद् का आयोजन आर्यसमाज, अल्मोड़ा में किया गया। उस समय मैं आर्यसमाज का मन्त्री था और अपने साथियों श्री पूरनसिंह, प्रधान (वर्तमान में 101 वर्ष की आयु), श्री रामगोपाल सिंह, आदि के सहयोग से 2–3 दिन का यह उत्सव सोल्लास सम्पन्न हुआ। इसमें दुर्घटनावश श्री वरुण मुनि तो नहीं आ पाये थे, किन्तु श्री वेदप्रिय शास्त्री एक दिन पूर्व ही पहुंच चुके थे। लगभग 30 आर्य विद्वान् उस अवसर पर अल्मोड़ा के अधिवेशन में पहुंचे थे, जिनमें स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती, डॉ. भवानीलाल भारतीय, डॉ. प्रशान्त कुमार वेदालंकार, डॉ. रघुवीर वेदालंकार (दोनों विद्वान सपत्नीक), डॉ. कुशल देव शास्त्री, डॉ. स्वामी गुरुकुलानन्द सरस्वती, डॉ. सुमेधामित्र वेदालंकार, आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती, श्री जीवानन्द नैनवाल, डॉ. विक्रमदेव जी (चण्डीगढ़) आदि नाम स्मृतिपटल पर हैं। इस अवसर पर आर्यसमाज द्वारा इन पंक्तियों के लेखक के सम्पादकत्व में ''अदिति'' नाम से एक स्मारिका प्रकाशित की गई, जिसमें आर्यसमाज, अल्मोड़ा के 90 वर्षीय इतिहास के साथ कुछ लेख भी छपे हैं। इस पत्रिका का विमोचन स्व0 भैरवदत्त पाण्डे, आई.सी.एस. (भूतपूर्व राज्यपाल, पश्चिम बंगाल और पंजाब) जी के कर कमलों से हुआ था। परिषद् के इस अधिवेशन में डॉ० भवानीलाल भारतीय जी ने ऋषि दयानन्द सरस्वती और आर्यसमाज को लक्ष्य कर जो भावपूर्ण भाषण दिया, उससे श्रोतागण गदगद हो गये थे और नवागन्तुकों को आर्यसमाज के विषय में बहुत जानकारी प्राप्त हुई।

लगभग 12–14 वर्ष पूर्व आर्य लेखक परिषद् के नये चुनाव के अवसर पर स्व० श्री वरुण मुनि जी के प्रस्ताव से मुझे परिषद् का अध्यक्ष, डॉ० रघुवीर वेदालंकार जी को उपाध्यक्ष और डॉ० कुशलदेव शास्त्री को मंत्री नियुक्त किया गया। किन्तु तदनन्तर अधिवेशन के लिए सदस्यों के रहन–सहन की व्यवस्था कोटा से बाहर न हो पाने से परिषद् का कार्य आगे नहीं बढ़ पाया। कुछ दिनों बाद पहले डॉ० कुशलदेव शास्त्री और बाद में वरुण मुनि जी के निधन होने पर आर्य लेखक परिषद् का सारा कार्य अवरुद्ध सा हो गया। अब सुना है श्री वेदप्रिय शास्त्री जी के पुनः प्रयासों से दिल्ली में आर्य लेखक परिषद् नये रुप से कार्य करने लगी है, जो शुभ संकेत है।

डॉ० भवानीलाल भारतीय जी से दो–तीन मास पूर्व उनके स्वास्थ्य के बारे में मैंने पूछा था, तब वह कुछ ठीक थे। अकस्मात उनका 90 वर्ष की आयु में 12 सितम्बर, 2018 को निधन हो गया। इससे सम्पूर्ण आर्यसमाजों में शोक छा गया। पुराने आर्य विद्वानों का एक युग चला गया। दिवंगत आत्मा को विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित है। ईश्वर करे डॉ० भारतीय के सदृश और पुराने उच्च कोटि के विद्वानों के अनुरूप आगे भी उत्तमोत्तम वैदिक धर्म प्रचारक, लेखक, विद्वान गुरुकुलों से सुशिक्षित होकर इस ऋषि वाटिका आर्यसमाज को संसार में निरन्तर सींचते हुये समृद्ध बनाते रहें। इत्योम् शम्।

योगेश्वर महाराज दयानन्द

—प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु

वेदोक्त जीवन पद्धति में अष्टांग योग का एक विशेष स्थान है। अष्टांग योग उन्नति का सोपान है। मानव जीवन की सफलता विफलता की कसौटी अष्टांग योग ही को जानना मानना चाहिये। इस कसौटी पर ऋषि दयानन्द का जीवन कसकर देखिये। ऋषि इसपर खरे उतरते हैं। वे एक सुधारक, विचारक, कुरीति—निवारक, जाति भक्त, देश भक्त, वेद भक्त, दलितोद्धारक, विधवाओं, अनाथों व गो अदि प्राणियों के रक्षक थे। ये सब कुछ ठीक है परन्तु यह भी नहीं भूलना चाहिये कि महर्षि दयानन्द एक महान् दार्शनिक, वेदवेत्ता, योगी, योगेश्वर ऋषि और महर्षि थे।

उनकी सत्यनिष्ठा, निर्भीक सत्यवाणी व योग साधना एवं अटल ईश्वरविश्वास पर जितना भी लिखा जाय थोड़ा है। श्री गोपालराव हरि ने ऋषि का जीवन चरित्र लिखना आरम्भ किया। इसमें यह लिख दिया कि महाराणा सज्जनसिंह आपसे प्रतिदिन दो बार मिलने आते थे। यह तथ्य नहीं था। वह केवल तीन बार ऋषिजी से मिले थे। एक साधु श्री अमृतरामजी ने ऋषि को पत्र लिखकर इस असत्य लेख की ओर आपका ध्यान दिलाया। ऋषिजी ने वह पत्र उक्त लेखक के पास भेजा और साथ अपने पत्र में लिखा, ''जब आपको मेरा इतिहास ठीक ठीक विदित नहीं, तो उसके लिखने में कभी साहस मत करो। क्योंकि थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोषकृत्य बिगड़ जाता है। ऐसा निश्चय रखो।''

उन्हें मृत्यु की परवाह नहीं थी

ऋषिवर सम्वत् १९३६ में लिखे अपने एक पत्र में अपने विरोधियों को यह लिखते हैं। ''शरीरपात की तो मुझे चिन्ता नहीं, परन्तु जो उपकार कार्य मैं कर रहा हूँ वह अधूरा रह जायेगा।''

न्याय दीजिये—अन्याय तनिक न होने पावे

जोधपुर जाने से पूर्व श्री महाराज राजा को उपदेश देते हुए लिखते हैं, ''सदा बलवान् और राजपुरुषों से सताये हुओं की पुकार यदि भोजन पर भी बैठे हो तो भोजन को भी छोड़कर उनकी बात सुननी और यथोचित उनका न्याय करना। ऐसा न होवे कि निर्बल अनाथ लोग बलवान और राजपुरुषों से पीड़ित होके रुदन करें और उनका अश्रुपात भुमि पर गिरे कि जिससे सर्वनाश हो जावे।''

जिस महापुरुष के हृदय में दीनों दुखियों के दुःख निवारण की ऐसी चाह हो उसकी महानता का वर्णन करने में यह लेखनी अक्षम है। सहृदय पाठक स्वयं उस महात्मा की महिमा को जानने के लिए उस पावन जीवन— चरित्र के आर—पार जायेंगे तो आनन्द होगा।

विलासिता पतन की खाई

स्वामी जी महाराज ने लाहौर में कहा था कि धन सम्पदा का बहुत बढ़ जाना पतन का कारण बनता है। विश्व इतिहास इस आर्ष वचन की पुष्टि करता है।

पाप कैसे धुलते हैं?

पंजाब में ऋषि जी ने एक स्थान पर कहा था, ''तीर्थों का जल पापों को नहीं धो सकता। पाप शुभ संकल्पों व शुभ कर्मों से ही नष्ट होते हैं।'' ऐसी शिक्षा देनेवाले महात्मा कितने हैं? दुर्भाग्य से सन्त साधु पापों को क्षमा करने करवाने की बात ही करते हैं।

पाप न करना भी पुण्य है

अमृतसर में एक दरिद्र सज्जन उनके उपदेश सुनने आया करता था। एक दिन उसने आपसे पूछा, ''महाराज धनी लोग तो अन्न व धन का दान करके भवसागर से पार उतर जायेंगे। मैं तो न दानी हूँ और न ही ज्ञानी। न दान दे सकता हूँ और न ज्ञान दे सकता हूँ मेरा बेड़ा कैसे पार होगा,''

ऋषिवर ने उसे सान्त्वना देते हुए एक सरल उपदेश दिया कि आप भी धर्मात्मा और पवित्र बन सकते हैं। आप अपकार न कीजिये।

पाप से बचने का प्रयास करते रहें। पाप का न करना भी पुण्य है। जब एक व्यक्ति पाप करना छोड़ देता है तो पापियों की संख्या में एक की कमी हो जाती है और पुण्यात्मा सज्जन पुरुषों की संख्या में एक की वृद्धि हो जाती है।

अर्थ शुचिता व पवित्र आचरण से पार उतरोगे

गंगा तट पर विचरण करते हुए एक धुनिया आपके दर्शनार्थ आया करता था। आपने उसे ओ३म् का जप करने का उपदेश दिया। एक दिन उसने पूछा, ''महाराज मुझे और क्या करना है?'' आपने उत्तर दिया, अपने आचरण को शुद्ध पवित्र बनाओ। जितनी रूई लोगों से लो, ''उतनी ही लौटा दो। इसी व्यवहार से तुम पार हो जाओगे।''

सुस्ती के मारों में जोश तो आया

मथुरा में कुछ पण्डों ने महर्षि के आगमन पर उत्पात मचा रखा था। एक दिन कई पण्डे इकट्ठे होकर ऋषि के डेरे पर आकर शोर मचाने लगे। जिसके जी में जो आया सो कहा। सब लट्ठ घुमा–घुमाकर ऋषि को मारने की धमकियाँ दे रहे थे। वहाँ ऋषिजी के कुछ राजपूत भक्तों ने कहा, महाराज आज्ञा दें तो इन्हें सीधा कर दें या भगा दें।

वेद को कौन जानता था

लाला लाजपतरायजी ने लिखा है कि राजा राममोहनरायजी ने ईसाई पादरियों के आक्रमणों से हिन्दु धर्म को बचाने के उद्देश्य से वेदों के प्रमाण दिये, वैदिक साहित्य के कुछ अनुवाद भी प्रकाशित करवाये परन्तु वास्तव में ये वेदों के अनुवाद नहीं थे। राजा महोदय उपनिषदों को ही वेद समझते रहे। आचार्य चमूपतिजी ने इसी पर एक कविता में लिखा है–

मानिये पिन्हाँ से क्योंकर हों मुहकक आशना

राममोहनराय भी वेद उपनिषद् को कह गये अर्थात् ज्ञान पिपासु गवेषकों को वेदों के मर्म का क्या पता चले जबकि राजा राममोहनराय सरीखे महापुरुष भी उपनिषदों को ही वेद कहते बताते रहे। ऋषि दयानन्दजी ने आकर वेद का ज्ञान करवाया। वेद की पहचान करवाई।

कृषक की महिमा

श्री स्वामीजी महाराज गुजरात में वेद ज्ञान की गंगा प्रवाहित कर रहे थे। ग्रामीण कृषक ऋषि को अपने मध्य पाकर गद्गद हो रहे थे। ऋषि सबको एक ईश्वर की उपासना का उपदेश सन्देश सुनाते रहे। कृषकों ने कहा, महाराज आपने बड़ी कृपा की जो हम तुच्छ लोगों पर इतना उपकार किया।

ऋषिजी ने कहा, तुम स्वयं को तुच्छ क्यों मानते हो? आप लोग परिश्रम करते हो। आपके पुरुषार्थ से ही राजा व प्रजा सब जीवित हैं। तुम सच्चे वैश्य हो। अन्न धन के उपजानेवाले आप ही हैं। ऋषिवर के मुख से ये शब्द सुनकर ग्रामीण कृषक झूम उठे। उनको अपने महत्व का ज्ञान हुआ। किसान का गौरव क्या है–इसे जानते हुए भी वे लोग नहीं जानते थे। कारण यह था कि वेद विद्या का लोप हो जाने से एक लम्बे समय तक पाखण्डियों ने उनके मस्तिष्क में यही बिठा रखा था कि कृषक का धंधा अच्छा नहीं है। तुम सब मूर्ख हो, शुद्र हो। न शूद्र का गौरव था और न वैश्य का। न क्षत्रिय को कर्त्तव्य कर्म बताये गये और नही ब्राह्मण को गुणी, विप्र, विद्वान् और परोपकारी व सदाचारी बनाया गया।

सन्ध्योपासना परम कृत्य है

मिर्जापुर क्षेत्र में भ्रमण करते हुए ऋषि ने भक्तों को कहा, एकान्त में सन्ध्योपासना करनी चाहिए। वहीं दो आचार्य आपके दर्शनार्थ आये। वे दोनों तिलकधारी थे। ऋषिजी ने कहा, शोक महाशोक! तिलक आदि चिन्ह् बनाने में लोगों की रुचि है। मस्तक का श्रृंगार करने से अच्छा है कि उपासना द्वारा जीवन का श्रृंगार किया जाय।

एक अन्य स्थान पर ऋषिजी ने यह कहा था कि मस्तक के श्रृंगार पर जितना समय लगाया है इतना समय गायत्री जप पर लगाते तो बहुत लाभ होता।

भूपेन्द्र कुमार दत्त

—स्वामी यतीश्वरानन्द जी

बाघा जतिन से लेकर भगत सिंह, सूर्यसेन और सुभाष बोस तक के साथ मिलकर भारत की स्वाधीनता के लिये संघर्ष करने वाले भुपेन्द्र कुमार दत्त अकेले ऐसे क्रान्तिकारी हैं जो पाकिस्तान में सांसद और विधायक चुने गये तथा वहाँ प्रताड़ना झेलने के बाद भारत वापस आये।

भुपेन्द्र कुमार दत्त का जन्म 08 अक्टूबर 1894 को जेसोर जिले के ठाकुरपुर गाँव में हुआ था। अब यह क्षेत्र बांग्लादेश में है। इनके पिता कैलाशचन्द्र दत्त फरीदपुर में जमींदार के मैनेजर थे। भुपेन की माता बिमलसुन्दरी देवी इन्हें रामायण सुनाया करती थी। रामायण में लक्ष्मण के संयम से प्रेरित होकर इन्होंने ब्रह्मचर्य पालन का व्रत लिया तथा जीवन भर निभाया। जब ये फरीदपुर हाईस्कूल में पढ़ते थे तो स्वदेशी आन्दोलन के संघर्ष में इन्होंने भाग लिया तथा ''अनुशीलन समिति'' नामक गुप्त संस्था से जुड़ गये जो क्रान्तिकारी गतिविधियों के साथ–साथ समाज–सेवा के कार्य भी करती थी। उसी समय इन्होंने भागवद्गीता, बंकिमचन्द्र व विवेकानन्द साहित्य का भी अध्ययन किया तथा राष्ट्रवाद एवं बलिदान की भावना इनके मन में प्रगाढ़ होती गई।

इन्होंने कलकत्ता के स्कॉटिश चर्च कॉलेज में दाखिला लिया। कलकत्ता के राजनीतिक माहौल ने इनपर गहरा असर किया। 1911 में इनकी भेंट शचीन्द्र सान्याल तथा बाघा जतिन से हुई जो अपने–अपने स्तर से सशस्त्र संघर्ष के लिये तैयारी कर रहे थे। उस समय बाघा जतिन ने बडे विद्रोह की तैयारी के लिये क्रान्तिकारी गतिविधियों पर रोक लगा दी थी। अतः भूपेन 1913 में खुलना चले गये तथा वहाँ ''दौलतपुर हिन्दु अकादमी'' नामक संस्था से जुड़ गये। उन्हीं दिनों इनकी सुभाषचन्द्र बोस से भेंट हुई। जो तब एक विद्वान छात्र के रूप में जाने जाते थे। 1913 के मानसून के समय दामोदर नदी में आई बाढ़ से वर्धमान मिदनापुर व हुगली जिले बुरी तरह प्रभावित हुये थे। इस समय आपदा राहत कार्य करते हुए भुपेन ने बाघा जतिन के विराट व्यक्तित्व को पहचाना तथा उनके निर्देशन में काम करते रहे। ये समाज सेवा व क्रान्तिकारी दोनों में आगे रहते। जब भूपेन वापस दौलतपुर आये तो बाघा जतिन ने डा० अमूल्य उकिल के लिये एक घोड़ा भेजा। इससे भूपेन को भी घुड़सवारी सीखने का मौका मिला। फिर डा० उकिल और भूपेन ने अन्य छात्र सहयोगियों को सैनिक संघर्ष के लिये हथियार जमा करने, मिलिट्री ड्रिल, सिगनल आदि का प्रशिक्षण देना शुरू किया। सुभाष बोस ने यह प्रशिक्षण देखा और वे इससे इतने प्रभावित हुए कि जब चौदह वर्ष बाद 1928 में उन्होंने ''बंगाल वालंटियर्स'' का गठन किया तो भूपेन को प्रशिक्षण का काम सौंपा गया।

मार्च 1915 में भूपेन ने सारी व्यस्तताओं के बावजूद बारहवीं की परीक्षा अच्छे अंको से

पास की तथा बंगाली एवं अंग्रजी में विशेष योग्यता पाई। फिर इन्होंने कलकत्ता के संस्कृत कालेज में दाखिला लिया तथा सुभाष बोस के साथ कलकत्ता के प्रसिद्ध ''प्रेसिडेंसी कॉलेज'' से दर्शन शास्त्र की भी पढ़ाई की। दूरस्त जिलों से कलकत्ता आने वाले मेधावी छात्रों के लिये इन्होंने एक छात्रावास भी खोला। जिसमें मेघनाद साहा (बाद में प्रसिद्ध वैज्ञानिक) जैसे छात्रों को रहने का अवसर मिला। इस छात्रावास में बाघा जतिन की क्रान्तिकारी गतिविधियों से जुडे कई लोग भी रहते थे। 10 सितम्बर 1995 को बाघा जतिन की मृत्यु के बाद जब क्रान्तिकारी वर्ग में घोर निराशा का वातावरण था, भूपेन आगे आये और नेतृत्व की कमान संभाली। इन्होंने क्रान्तिकारी गतिविधियों के लिये सम्पर्क स्थापित करने, धन इकट्ठा करने तथा प्रेरणा देने का काम जारी रखा। 17 मई 1917 को इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जब सरकार ने ''हिन्दु–जर्मन षडयंत्र'' केस में गिरफ्तार राजनैतिक कैदियों की रिहाई पर विचार करने से साफ मना कर दिया तो भूपेन तथा जितेन लाहिडी ने 42 प्रमुख व्यक्तियों को एक पत्र भेजकर जेल में भूख हड़ताल के कार्यक्रम की जानकारी दी। इस पर भूपेन को बिलासपुर जेल भेज दिया गया जहाँ इन्होंने 78 दिन की भूख हड़ताल की। यह उस समय एक रिकार्ड था।

1920 में रिहा होने के बाद भूपेन ने देखा कि राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य पर गाँधी का असहयोग आंदोलन जोर पकड़ रहा था। ''जुगांतर'' दल के प्रमुख नेता के रूप में ये कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन के दौरान गांधी से मिले। यहाँ गाँधी ने इन्हें भरोसा दिलाया कि आजादी मिलने पर कांग्रेस को स्वतन्त्र भारत की जन–संसद के रुप में बदल दिया जायेगा। तब जुगांतर का क्या भविष्य हो इस पर चर्चा करने भूपेन पांडिचेरी में अरविन्द घोष के पास गये। अरविन्द घोष ने इन्हें कहा कि गाँधी का एक वर्ष में स्वराज का नारा व्यवहारिक नहीं है पर इस समय गाँधी जी राष्ट्रभक्ति के विचार का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः उनका विरोध बेकार है। उन्होंने क्रान्तिकारियों को सलाह दी कि बिना अपने आदर्शों से समझौता किये गाँधी के आंदोलन का सहयोग करें।

गाँधी के असहयोग आंदोलन को वापस लेने के बाद भूपेन ने 10 सितम्बर 1923 को बाघा जतिन के बलिदान की आठवीं वर्षगांठ मनाई। इस पर उन्हें 23 सितम्बर 1923 को गिरफ्तार कर लिया गया तथा मांडले जेल भेज दिया गया। कुछ समय बाद सुभाषचन्द्र बोस भी इसी जेल में आ गये। यहाँ जेल में भूपेन ने बर्मा के आंदोलनकारियों को क्रान्तिकारी संघर्ष की तैयारी करने के लिये तैयार किया। 1926 में जेल से रिहा होने पर इन्होंने भगत सिंह व सूर्य सेन से सम्पर्क साधा तथा बम बनाने, शस्त्र एकत्र करने व बांटने का काम किया।

साथ ही ये क्रान्तिकारियों के मुखपत्र ''स्वाधीनता'' के सम्पादक भी बन गये। 1930 में ''चिटगाँव आर्मरी रेड'' के बाद भूपेन ने सूर्य सेन के साथियों को छिपाया तथा इसी कारण एक भेदिये के सुराग पर इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इस बार इन्हें आठ वर्ष कैद की सजा हुई।

1938 में रिहा होने पर इन्होंने

चितरंजन दास द्वारा स्थापित ''फार्वड'' नामक साप्ताहिक का सम्पादन संभाला। इनके लेखों में क्रान्ति का घोष था तथा क्रान्तिकारी इनके लेखों को बड़े चाव से पढ़ते थे। 1941 में इन्हीं लेखों के कारण तथा सुभाष के जेल से भाग जाने के कारण इन्हें फिर से गिरफ्तार कर लिया गया तथा पाँच वर्ष बाद 1946 में क्रान्ति पर इनके लेखों का संग्रह एक पुस्तक के रूप में छपा जिसका प्राक्कथन डा० राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा था।

रिहा होने पर इन्होंने देखा कि बंगाल में बँटवारे को लेकर साम्प्रदायिक दंगे फैल गये हैं। दंगों से लोगों को बचाने के प्रयास में 15 अगस्त 1947 को इन्होंने स्वयं को पूर्वी पाकिस्तान में पाया। इन्होंने पाकिस्तान की राजनीति में अपने क्षेत्र के हिन्दुओं को बचाने की आवश्यकता अनुभव की और पाकिस्तान की राजनीति में कूद पडे। इन्हें वहाँ की संसद का अपने क्षेत्र से सदस्य चुना गया। 07 मार्च 1949 को जब पाकिस्तानी प्रधानमंत्री लियाकत अली खान ने पाकिस्तानी संसद में यह कहा कि पाकिस्तान एक मुस्लिम राष्ट्र होगा तो इन्होंने प्रत्युत्तर में इसका भारी विरोध किया। साथ ही पूर्वी पाकिस्तान में बांग्ला के स्थान पर उर्दू लागू करने का भी इन्होंने विरोध किया। पाकिस्तान के अगले प्रधानमंत्री ख्वाजा निजामुद्दीन भूपेन की संगठन क्षमता के प्रशंसक थे तथा ''इत्तेफाक'' नामक अखबार में इनके लेख बड़े ध्यान से पढ़े जाते थे। फिर इन्हें पूर्वी पाकिस्तान में विधायक चुना गया। शेख मूजीबुर्रहमान इनके बडे प्रशंसक थे क्योंकि पाकिस्तान में बंगालियों के अधिकारों के लिये ये हमेशा लड़ते रहे। 1958 में जब पाकिस्तान के सेनाध्यक्ष अयूब खान ने मार्शल लॉ लगा दिया तो भूपेन को नजरबंद कर दिया गया तथा इनकी सारी राजनैतिक गतिविधियों पर रोक लगा दी गयी। पाकिस्तान में बंगालियों और विशेषकर हिन्दुओं का दमन देखकर इन्होंने पुनः भारत वापसी के प्रयास शुरू किये तथा 1962 में रिहा होने पर भारत आ गये तथा भरतीय नागरिकता ग्रहण कर ली। भारत में इन्होंने इतिहास लेखन का कार्य किया तथा 1971 में बांग्लादेश की स्वतन्त्रता का समर्थन किया।

1971 में प्रसिद्ध नेता धीरेन्द्र नाथ दत्त की पाकिस्तानी सेना ने यातनाएं देकर कोमिला में हत्या कर दी। 29 मार्च 1971 को इस जघन्य अपराध को अंजाम देने वाली पाकिस्तानी सेना को भारतीय सेना ने 1971 में ही परास्त कर दिया तथा बांग्लादेश एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। भूपेन्द्र कुमार दत्त ने वहाँ हुए दमन व अत्याचार के सम्बन्ध में पहले ही सबको चेतावनी दे दी थी। बाघा जतिन के जन्मशती समारोह में शामिल होने के बाद 29 सितम्बर 1979 को कलकत्ता में भूपेन्द्र कुमार दत्त का देहान्त हो गया। लगभग पूरे क्रान्तिकारी आंदोलन की तीन पीढ़ियों से जुडे रहे भूपेन्द्र कुमार दत्त एक महान इतिहासकार, विचारक व समाजसेवी भी थे। अपने जीवन के कुल पच्चीस वर्ष जेल में बिताने वाले भारतवर्ष के इस वीर क्रान्तिकारी ने पाकिस्तान में भी अल्पसंख्यक हिन्दुओं की रक्षा के लिये काम किया यह अविस्मरणीय है।

हनुमान की राम से भेंट

–ईश्वरी प्रसाद प्रेम

देखते–देखते महावीर ने सैनिक वेश उतार अपने को ब्रह्मण के वेश से सज्जित कर लिया। और दूसरे ही क्षण वे श्री राम–लक्ष्मण के समीप थे।

श्री रामचन्द्र के समीप पहुँचते ही उनकी धुंधली–धुंधली स्मृति जैसे निखरने लगी। उनकी खोई स्मृति उनका साथ देने लगी। अति बाल्यकाल में अयोध्या प्रवास के एक–एक चित्र जैसे उनके नेत्रों में तैर गये। फिर श्री राम की शौर्य मिश्रित शालीनता, उनका अनुपम सौन्दर्य और उनके मानस में सीता–वियोग जन्य गहन वेदना की स्पष्ट छाप बुद्धि–निधान महावीर से छिपी न रही। राजनीति के महा–पण्डित हनुमान ने फिर भी अपने मनोभावों को छिपाया।

बड़े विनीत भाव से श्रीराम–लक्ष्मण को प्रणाम कर उनके प्रति उचित पूजा और प्रशंसा के भाव व्यक्त करते हुए महर्षि वाल्मीकि के शब्दों में वे बोले– हे राजर्षे! देव समान तेजस्वी महात्मन्! आप तपस्वियों के वेष में इस नदी एवं वन की शोभा बढ़ाते हुए, सुवर्ण समान देह वाले सुन्दर धनुषों को धारण कर, वन्य जीवों को आश्रित करने वाले धैर्य की मूर्ति, सिंह समान पराक्रमी, सूर्य और चन्द्र के सम तेजस्वी कौन हैं और इधर कैसे पधारे हैं? गोस्वामी जी के शब्दों में–

को तुम श्यामल गौर शरीरा। क्षत्री रूप फिरहु बन वीरा।।
कठिन भूमि कोमल पद गामी। कवन हेतु वन विचरहु स्वामी।।

और उत्तर में जब उन्होंने श्री राम से सुनाः–

हंसि बोले रघुवंश कुमारा। विधि कर लिखी को मेटनहारा।।
कौशलेश दशरथ के जाये । हम पितु वचन मानि वन आये।।

नाम राम–लक्ष्मण दोउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई।।
इहाँ हरी निसिचर वैदेही। खोजत फिरहिं विप्र हम तेहि।।

–तो महावीर गद्‌गद् हो ज्यों ही श्री राम का चरण स्पर्श करने लगे, भगवान् राम ने उन्हें बांहो में भर लिया और बोले– ''विप्रवर! यह आप क्या करने लगे हैं?''

श्रीराम ने महावीर हनुमान के प्रथम दर्शन में ही अपनी पूर्व स्मृति के आधार पर उन्हें पहचानने का यत्न किया था, फिर महर्षि अगस्त्य ने भी उनके विषय में सब कुछ बता दिया था। पर हनुमान के विप्र वेष ने उन्हें धोखे में डाल दिया था। इसी से वे बोले–''देव! आप अपना परिचय तो दीजिये।'' इतना सुनना था कि हनुमान बर–बस उनके चरणों में गिर पड़े। बोले–''भगवान! आप अपने भक्त को क्यों कर भूल गये? मेरी आयु तो तब केवल ७ वर्ष की थी, फिर मैं अज्ञ और जड़वत् हूँ। पर आप तो तब किशोर थे, जब अयोध्या स्थित महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में मैं आपके साहचर्य में रहा था। और आप तो सुविज्ञानी हैं, अपने चरणों में प्रगाढ़ प्रीति रखने वाले अपने इस बाल्य कालीन भक्त को आपने कैसे भुला दिया, प्रभो!''

श्रीराम ने पुलकित हृदय हनुमान को गले लगाते हुए कहा– ''मेरे आत्मस्वरूप प्रिय हनुमान जी! आखिर मैं भी तो मनुष्य ही हूँ। मनुष्य की अल्पज्ञता से कौन परिचित नहीं है? फिर मैंने तुम्हें पहचानने का यत्न भी किया था, पर तुम्हारे इस विप्र वेश ने मुझे भ्रम में डाल दिया। बन्धु! उठो तुम तो मेरे निकट भरत और लक्ष्मण सदृश प्रिय हो।''

हनुमान ने तब आदर भरे शब्दों में अपना और सुग्रीव का परिचय देते हुए कहा–

युवाभ्यां स हि धर्मात्मा सुग्रीवः सख्यमिच्छति।
तस्य माँ सचिवं वित्त वानरं पवनात्मजम्।। कि0 ३।२२

''हमारा राजा सुग्रीव है। वह आपसे मित्रता चाहता है। वह बड़ा धर्मात्मा और विद्वान् है और मैं पवन पुत्र उसका मंत्री हूँ।''

यह सुनकर श्रीराम बोले, ''लक्ष्मण! देखो यह सुग्रीव–मंत्री हनुमान कैसे चतुर तथा विद्वान हैं और कैसी कल्याण भरी स्पष्ट वाणी बोलते हैं। इतनी देर बोलने पर भी कोई शब्द असंस्कृत (अशुद्ध) नहीं बोला। निश्चय है कि यह वेद और वेदांगो के पूर्ण पण्डित हैं, क्योंकि–

नाऋग्वेद विनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नसामवेदविदुषःशक्यमेवं विभषितुम्।।२८।।

नूनं व्याकरणं कृम्स्मनेन कहुधा श्रुतम्।
बहुव्याहरतानेन न किञिचदपशब्दित्।।२६।।

न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रूवोस्तथा।
अन्येश्वपि च गात्रेशु दोषःसं विदितः क्वचि।।३0।।

संस्कारक्रमसं पन्ना मद्भुमाबिलम्बिताम्।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्षिणीम्।।३२।।

एवंविधो यस्य दूतो न भवेत् पार्थिवस्य तु।
सिद्धयन्ति हि कथंतस्य कार्यणां गतयोऽनघ।।३४।।
'किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३

–बिना ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम और अथर्ववेद के जाने ऐसा कोई नहीं बोल सकता। निःसंदेह इन्होंने अनेक बार व्याकरण पढ़ा है और यह बड़े सभ्य, सुशिक्षित तथा संस्कार करने वाले माता–पिता के नियम पूर्वक जीवन–व्रत रखने वाले पुत्र हैं। इनके मुख, नेत्र, मस्तक व भ्रूभाग में किसी प्रकार का भी दोष व चंचलता दिखाई नहीं देती तथा और भी किसी अंग स्वभाव तथा चेष्टा में त्रुटि प्रतीत नहीं होती। सचमुच जिस पार्थिव (राजा) का ऐसा दूत न हो उसके कार्य सिद्ध नहीं हो सकते। जिसके यह दूत हैं उसके सब कार्य सिद्ध ही हों।

इसके पीछे लक्ष्मण ने सारा वृतान्त सुनाया और कहा कि हे हनुमान्! यद्यपि हमारा कुल और बल जगत् प्रसिद्ध है। परन्तु इस समय सीता के हरे जाने और दनु–पुत्र कबन्ध के कहने पर हम आपकी और सूग्रीव की शरण में आये हैं। आप हमें अवश्य शरण में लें–

अहं चैव च रामश्च सुग्रीवं भारणं गतौ।।४।१७।।

हनुमान ने राम लक्ष्मण को सीता पाने का विश्वास दिलाते हुए कहा, कि सुग्रीव भी आपकी भाँति, भाई की क्रूरता के कारण, राज्य–भ्रष्ट हुए तथा स्त्री से वियुक्त, पर्वत पर निवास करते हैं। आप चलकर उनसे मैत्री सम्पादन करें। फिर अवश्य आपका और उनका कार्य सिद्ध हो जाएगा।

आर्य समाज–एक चिंतन

—आर्य रविन्द्र कुमार

1. **ईश्वर एक है अनेक नहीं:**
ईश्वर एक है, अनेक नहीं। ईश्वर निराकार वा अन्तर्यामी है। ईश्वर अजन्मा, अनन्त और अनादि है। ईश्वर ज्ञानवान् व न्यायकारी है। उत्पत्ति और प्रलय करने वाला भी ईश्वर सर्वशक्तिमान व अनुपम है। ईश्वर सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा सर्वत्र व्यापक है।

2. **ओ३म् ईश्वर का सर्वोत्तम नाम है:**
'ओ३म् खं ब्रह्म' (यजुर्वेद ४०/१७)

प्रकाश के समान सर्वव्यापक, सबसे बड़ा, सब जगत का रक्षक ओ३म् है।

ओ३म् क्रतोस्मर। (यजुर्वेद ४०/१५)

हे कर्मशील मनुष्य! ओ३म् को सदैव स्मरण कर।

ओ३म् इति एतद् अक्षरम् उद्गीथम् उपासीत।
(छान्दोग्योपनिषद्)

ओ३म् जिसका नाम है और जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी योग्य है, अन्य किसी की नहीं। इसी प्रकार माण्डूक्योपनिषद्, कठोपनिषद् आदि अनेक आर्ष ग्रंथों में ओ३म् शब्द की महत्ता बताई गयी है।

ओ३म् नाम में परमेश्वर के सभी गुणों का समावेश होता है। ईश्वर के अन्य नाम जैसे ब्रह्म, ब्रह्मा, शिव, विष्णु, राहु, रुद्र, कुबेर, गणेश, गणपति, अग्नि, वायु, ईश्वर, आदित्य, देव, देवी, लक्ष्मी, शंकर, शनैश्चर, सरस्वती, सविता, नारायण, यम, हिरण्यगर्भ, पिता आदि परमात्मा के किसी विशेष गुण को ही प्रतिबिम्बित करते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रथम् समुल्लास में परमेश्वर के सौ नामों अर्थात् गुणों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है ताकि मनुष्य इन नामों से भ्रमित न हो और उनको अन्य देव मानकर उनकी पूजा अथवा अराधना न करें।

3. **ईश्वर निराकार है और वह अवतार नहीं लेता:**
ईश्वर निराकार है। उस पर हमारी भक्ति, स्तुति, पूजा, उपासना, जाप, नाम–स्मरण, अराधना, गुणगान व कीर्तन का कोई प्रभाव नहीं होता। वह लाभ–हानि, सुख–दुःख तथा प्रसन्नता–अप्रसन्नता से ऊपर है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा है–

न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुसा पश्यति कश्चनैनम्।
हृदा हृदिस्थं मनसा च एनमेव विदुरमृतास्ते भवन्ति।।
(श्वेताश्वतरोपनिषद्)

अर्थात परमात्मा का कोई रूप नहीं जिसे आंखों से देखा जा सके। उसे कोई भी प्राणी आंखों से नहीं देख सकता। वह हृदय में स्थित है। जो उसे हृदय से और मन से जान लेते हैं वे आनन्द को प्राप्त करते हैं।

तिलेशु तैलं दधिनीव सर्पिरापः स्त्रोतः सु अरणीशु चाग्निः।
एवमात्मात्मनि गृह्यते ऽसौ सत्येनैनं तपसायोऽ नुपश्यति।।
(श्वेताश्वतरोपनिषद्)

अर्थात् जैसे तिलों में तेल, दही में घी, झरनों में जल और अरणी नाम की लकड़ी में आग रहती

है और तिलों को पीलने से, दही को बिलोने से, और अरणियों को रगड़ने से ये प्रकट होते है। वैसे ही जीवात्मा में परमात्मा रहता है और वह वहीं मिलता है। सत्य और तप से उसे जाना जा सकता है।

ऋग्वेद (१.१४३.४) कहता है–

यमेरिरे भृगवो विशहववेदसं नाभ पृथिव्या
भुवनस्य मज्मना।
अग्नि सं गीर्भिर्हिनुहि स्व आ दमेय एको
दस्वो वरुणो न राजति।।

हे मनुष्यो। जो विद्वानों के द्वारा जानने योग्य, सर्वव्यापक, प्रशंसा योग्य, सच्चिदानन्द आदि लक्षणों वाला सर्वशक्तिमान्, अनुपम, अतिसूक्ष्म, स्वयं प्रकाशस्वरूप और अन्तर्यामी परमेश्वर है। उसे योगांगों के अनुष्ठान की सिद्धि के द्वारा तुम अन्दर से जानो।

ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता। वाल्मीकि रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपने जीवन में आ रहे कष्टों का वर्णन करते हुए अपने कनिष्ठ भ्राता लक्ष्मण से कहते हैं–

'पूर्व जन्म में मैंने निश्चय ही घोर पाप किये हैं और बहुत वार किये हैं। उन्हीं पापों का फल आज मुझे प्राप्त हो रहा है और मेरे ऊपर दुःख के ऊपर दुःख आ रहे हैं।'

महाभारत के सभापर्व में योगीराज कृष्ण कहते हैं– 'हम यह नहीं जानते कि मृत्यु कब आयेगी, रात में आयेगी अथवा दिन में आयेगी। हमने यह नहीं सुना कि युद्ध न करके कोई अमर हुआ हो।'

यह दोनों दृष्टान्त यह वर्णन करते है कि वे ईश्वर नहीं अपित ऐतिहासिक आप्त मनुष्य थे। श्रीकृष्ण महाराज यदि ईश्वर होते तो जरासंध के भय से मथुरा छोड़कर द्वारका न बसाते।

4. **मूर्ति पूजा ईश्वर की पूजा नहीं है:** आदि गुरु शंकराचार्य भी मूर्त्ति–पूजा के विरोधी थे। उन्होंने अपनी पुस्तक 'परापूजा' में कहा है–

'तीर्थों में, ऐसे यज्ञों में जिनमें पशु बलि दी जाती है और लकड़ी, पत्थर, मिट्टी की मूर्त्ति में जिनका मन है, वे मनुष्य मूढ़ मति वाले हैं।'

'अपने घर की खीर को छोड़ के मूर्ख मनुष्य भीख मांगता फिरता है। लकड़ी, पत्थर, मिट्टी में देवताओं की कल्पना करता है। अपने अन्दर परमात्मा घर में खीर समान है तथा मूर्त्ति–पूजा भीख समान है।'

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों के आधार पर यह सिद्ध किया कि उनमें मूर्त्ति–पूजा का कोई विधान नहीं है। उन्होंने अपने जीवन–काल में अनेक शास्त्रार्थ किये परन्तु किसी में भी कोई भी व्यक्ति उनके सन्मुख वेदों में मूर्त्ति–पूजा के विधान को सिद्ध नहीं कर पाया। काशी शास्त्रार्थ इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

5. **परमात्मा की स्तुति–प्रार्थना व उपासनाः** परमेश्वर की भक्ति–ईश्वर भक्ति, स्तुति, पूजा, जाप, नाम–स्मरण, प्रार्थना, उपासना, कीर्तन, गुणगान आदि जो भी हम परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिये करते हैं उस परमेश्वर पर हमारे किसी भी ऐसे कर्म का प्रभाव नहीं होता। वह लाभ–हानि, दुःख–सुख, प्रसन्नता–अप्रसन्नता से ऊपर है।

परमात्मा की स्तुति– प्रार्थना व उपासना उसी प्रकार मनुष्य की आत्मा और अन्तःकरण की पवित्रता के लिये आवश्यक है जिस प्रकार शरीर की रक्षा के लिये प्रतिदिन सात्विक भोजन आवश्यक है।

स्तुति से मनुष्य की प्रीति ईश्वर में बढ़ती है। उसका ईश्वर में विश्वास होता है और उसके गुणों का स्मरण करने से उसके गुण, कर्म और स्वभाव में सुधार होता है।

प्रार्थना से मनुष्य में निरभिमानिता आती है और आत्मबल बढ़ता है। उपासना से मनुष्य का परमात्मा से सामीप्य और साक्षात्कार होता है। मनुष्य में कष्ट सहन करने की शक्ति बढ़ती है। वह बड़ी से बड़ी आपत्ति में भी नहीं घबराता, वह मृत्यु में भी हंसता रहता है।

अन्तः करण को मलिन करने वाली स्वार्थ तथा संकीर्णता की सभी क्षुद्र भावनाओं से ऊंचे उठ कर काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि कुटिल भावनाओं तथा सब मलिन वासनाओं को दूर करने के लिये तथा अपने हृदय की आसुरी प्रवृत्तियों के साथ युद्ध में विजय पाने के लिये प्रतिदिन प्रातः और सांय संध्या में बैठकर अपना सम्पूर्ण ध्यान लगाते हुए वैदिक मंत्रों द्वारा परमात्मा की स्तुति–प्रार्थना व उपासना करनी चाहिये।

सात्विक प्रवृत्तियों को जागृत करने तथा क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भयता, अहंकार–शून्यता इत्यादि शुभ भावनाओं को ग्रहण करने के लिये; शरीर स्वस्थ तथा परिपुष्ट, मन सूक्ष्म तथा उन्नत, आत्मा पवित्र तथा सुन्दर, हृदय दया और सहानुभूति से भरपूर, वाणी में मिठास, दृष्टि में स्नेह और प्यार, विद्या और ज्ञान में परिपूर्णता तथा व्यक्तित्व की महानता व विशालता के लिये परमात्मा की स्तुति–प्रार्थना वा उपासना द्वारा संस्पर्श अति आवश्यक है तकि मानव की शक्तियां विकसित हों।

मनुस्मृति (२/१०२) में लिखा है–

पूर्वा संध्यां जपन् तिष्ठन् नैशम् एनः व्यपोहति।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्।।

अर्थात् मनुष्य प्रातः और सांय संध्या में बैठकर अपने मानसिक विचारों पर चिन्तन, मनन व पश्चाताप करके अपने विकारों को दूर करें तथा गायत्री जप से अपने संस्कारों को शुद्ध करके पवित्र करें।

6. परमेश्वर दयालु व न्यायकारी है:

परमेश्वर अपने न्याय पर अटल है और प्राणी को उसके कर्मो का फल देने पर दृढ़। कोई भी पूजा, आराधना व उपासना अथवा कोई लग्न, मुहूर्त्त, मन्नत इत्यादि परमेश्वर को अपने अपक्षपात न्याय की दृढ़ता से डिगा नहीं सकती और उसे अपने निर्णय (मनुष्य के प्रारब्ध) को परिवर्तित करने के लिये बाध्य नहीं कर सकती क्योंकि वह निष्पक्ष और न्यायकारी है।

ईश्वर दयालु है। वह मां के पेट से मरणपर्यन्त हमारी रक्षा करता है तथा हमारे पापों का दण्ड देकर हमारा सुधार करता है यदि ईश्वर पाप का उचित दण्ड न दे तो ईश्वर न्यायी नहीं रह सकता।

7. ईश्वर का कर्मः

ईश्वर का कर्म जगत् की उत्पत्ति, पालन

और विनाश करना तथा सब जीवों को पाप–पुण्य के फल ठीक–ठीक पहुंचाना है। ऋग्वेद के मंत्र (१०/३६/१४) में कहा गया है–

ओ३म् पश्चातात्सविता पुरस्तात्सवितो नो तरातात्स्विताधरातात्।

सविता नः सुवतु सर्वतानि सविता नो रासतों दीर्घमायुः।।

भावार्थः जगदुत्पादक परमेश्वर पीछे से है। जगदुत्पादक परमेश्वर सामने से हैं जगदुत्पादक परमेंश्वर ऊपर से है। जगदुत्पादक परमेश्वर नीचे से है। जगदुत्पादक, जगत् का शासक, शुभ प्रेरक, कृपालु परमेश्वर हमें सब पदार्थ, सभी प्रकार का विस्तार देवे। वस्तुतः ईश्वर का कर्म जगत् की उत्पत्ति, पालन और विनाश करना है और जीव मात्र को पाप–पुण्य के फल ठीक–ठीक पहुंचाना ही है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा इस शब्दों का पूर्ण समर्थन है। अतः ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव सत्य ही हैं। जो केवल चेतनामात्र वस्तु है। पूर्णतया सत्य ही है। अतः हम सब को यह स्मरण रखना चाहिये कि–

जिसने सबको उत्पन्न किया वही ईश्वर है। जिसने सृष्टि के आदि में वेदों का बीजात्मक ज्ञान दिया वही सर्वज्ञ है। जो सबमें प्राण के समान व्यापक और प्रकाशक है वही ब्रह्म है। जिसने सूर्यादि को उत्पन्न करके अविरत ऊर्जा, पंचतत्वों से समुद्र तथा विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों तथा जीवों को जन्म दिया है उन सबका निमित्त कारण ईश्वर है।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन द्वारा आयोजित योग प्रशिक्षण शिविर (प्रथम स्तर)

(02 अप्रैल सायंकाल से प्रातः 09 अप्रैल 2019 तक)

योग शिविर निर्देशक–आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य

1. यह शिविर आवासीय है। शिविर में महिलाओं व पुरुषों की निवास व्यवस्था पृथक–पृथक होती है।
2. सम्पूर्ण शिविर मे विधिवत् भाग लेने के इच्छुक सज्जन ही आवेदन हेतू सम्पर्क करें। शिविर समापन से पूर्व वापिस जाना सम्भव नही हो सकेगा तथा 02 अप्रैल सायंकाल 6:00 बजे के बाद प्रवेश नही दिया जायेगा। इस कष्ट हेतु हम पूर्व से ही क्षमा प्रार्थी हैं।
3. प्रथम स्तर के शिविरों में भाग लेने वाले साधक ही आगे गम्भीर साधना के शिविरों में भाग ले सकेंगे।
4. शिविर में अधिकाधिक 125 साधक साधिकाओं की ही व्यवस्था सम्भव है। अतः इच्छुक जन पूर्व ही अपना स्थान सुरक्षित करा लें। पुराने शिविरार्थी भी भाग ले सकते है।
5. स्थान आरक्षण व अन्य जानकारी हेतु इन महानुभावों से सम्पर्क करें :–1. श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी, दिल्ली, (मो०नं०–09310444170) समय दिन में 10:30 बजे से सायं 4:00 बजे तक, एवं रात्री 8 बजे से 10 बजे तक, 2. श्री प्रेम जी – 9456790201 समय प्रातः 10:30 बजे से सायं 4:00 बजे तक, एवं रात्री 8 बजे से 9.30 बजे तक।

अस्सी घाव लगने पर भी युद्ध लड़ने वाले महान क्षत्रिय योद्धा महाराणा सांगा

—डॉ० विवेक आर्य

सनातन—धर्म—रक्षक महान क्षत्रिय वीरों के वीर योद्धा महाराणा सांगा जो 80 घाव लगने के बाद भी युद्ध लड़ते रहे। इस महावीर योद्धा का 30 जनवरी को बलिदान हुआ था।

मेवाड़ योद्धाओं की भूमि है। यहाँ कई शूरवीरों ने जन्म लिया और अपने कर्तव्य का पालन किया। उन्ही उत्कृष्ट मणियों में से एक थे राणा सांगा। उनका पूरा नाम महाराणा संग्राम सिंह था। वैसे तो मेवाड़ के हर राणा की तरह इनका पूरा जीवन भी युद्ध के इर्द—गिर्द ही बीता लेकिन इनकी कहानी थोड़ी अलग है। एक हाथ, एक आँख, और एक पैर के पूर्णतः क्षतिग्रस्त होने के बावजूद इन्होंने ज़िन्दगी से हार नही मानी और कई युद्ध लड़े।

आप ज़रा सोचिए कि कैसा दृश्य रहा होगा जब वो शूरवीर अपने शरीर मे 80 घाव होने तथा एक आँख, एक हाथ और एक पैर पूर्णतः क्षतिग्रस्त होने के बावजूद युद्ध लड़ने जाता था।

कोई योद्धा, कोई दुश्मन इन्हें मार न सका। पर जब कुछ अपने ही लोग विश्वासघात करें तो कोई क्या कर सकता है? आईये! जानते हैं ऐसे अजेय मेवाड़ी योद्धा के बारे में। खानवा के युद्ध के बारे में एवं उनकी मृत्यु के पीछे के तथ्यों के बारे में।

परिचय

राणा रायमल के बाद सन् 1509 में राणा सांगा मेवाड़ के उत्तराधिकारी बने। इनका शासनकाल 1509— 1527 तक रहा। इन्होंने दिल्ली, गुजरात, व मालवा के मुगल बादशाहों के आक्रमणों से अपने राज्य की बहादुरी से रक्षा की। उस समय के वह सबसे शक्तिशाली राजा थे। इनके शासनकाल में मेवाड़ अपनी समृद्धि की सर्वोच्च ऊँचाई पर था। एक आदर्श राजा की तरह इन्होंने अपने राज्य की रक्षा तथा उन्नति की।

राणा सांगा अदम्य साहसी थे। इन्होंने शासक सुलतान मोहम्मद, माण्डु को युद्ध में हराने व बन्दी बनाने के बाद उनका राज्य उन्हें पुनः उदारता के साथ सौंप दिया। यह उनकी बहादुरी को दर्शाता है। बचपन से लगाकर मृत्यु तक इनका जीवन युद्धों में बीता। इतिहास में वर्णित है कि महाराणा संग्राम सिंह की तलवार का वजन 20 किलो था ।

राणा सांगा के युद्धों का रोचक इतिहास

महाराणा सांगा का राज्य दिल्ली, गुजरात, और मालवा के मुगल सुल्तानों के राज्यो से घिरा हुआ था। दिल्ली पर सिकंदर लोदी, गुजरात में महमूद शाह बेगड़ा और मालवा में नसीरुद्दीन खिलजी सुल्तान थे। तीनो सुल्तानों की सम्मिलित शक्ति से एक स्थान पर महाराणा ने युद्ध किया और महाराणा सांगा ने विजय प्राप्त की। सुल्तान इब्राहिम लोदी से बूँदी की सीमा पर खातोली के मैदान में विक्रमी सम्वत् 1574 (ई.स. 1517) में युद्ध हुआ। इस युद्ध में इब्राहिम लोदी पराजित हुआ और भाग

गया। महाराणा की एक आँख तो युवाकाल में भाइयो की आपसी लड़ाई में चली गई थी और इस युद्ध में उनका बायां हाथ तलवार से कट गया तथा एक पाँव के घुटने में तीर लगने से सदा के लिये वह लँगड़े हो गये थे।

महाराणा ने गुजरात के सुल्तान मुजफ्फर को लड़ाई में ईडर, अहमदनगर एवं बिसलनगर में परास्त कर अपने अपमान का बदला लिया और अपने पक्ष के सामन्त रायमल राठौड़ को ईडर की गद्दी पर पुनः बिठाया।

अहमदनगर के जागीरदार निजामुल्मुल्क ईडर से भागकर अहमदनगर के किले में जाकर रहने लगा और सुल्तान के आने की प्रतीक्षा करने लगा। महाराणा ने ईडर की गद्दी पर रायमल को बैठाकर अहमदनगर को जा घेरा। मुगलों ने किले के दरवाजे बंद कर लड़ाई शुरू कर दी। इस युद्ध में महाराणा का एक नामी सरदार डूंगर–सिंह चौहान (वागड़) बुरी तरह घायल हुआ और उसके कई भाई व बेटे मारे गये। डूंगरसिंह के पुत्र कान्ह–सिंह ने बड़ी वीरता दिखाई। किले के लोहे के किवाड़ पर लगे तीक्ष्ण भालों के कारण जब हाथी किवाड़ तोड़ने में नाकाम रहे, तब वीर कान्ह–सिंह ने भालों के आगे खड़े होकर महावत को कहा कि हाथी को मेरे बदन पर झोंक दे। कान्ह–सिंह पर हाथी ने मुहरा किया जिससे उसका शरीर भालो से छिन्न–छिन्न हो गया और वह उसी क्षण मर गया परन्तु किले के किवाड़ भी टूट गए। इससे मेवाड़ी सेना में जोश बढा और वे नंगी तलवारे लेकर किले में घुस गये और मुगल सेना को काट डाला। निजामुल्मुल्क जिसको मुबारिजुल्मुल्क का ख़िताब मिला था, वह भी बहुत घायल हुआ और सुल्तान की सारी सेना तितर–बितर होकर अहमदाबाद को भाग गयी।

माण्डू के सुलतान महमूद के साथ विक्रमी सम्वत् 1576 में युद्ध हुआ जिसमें 50 हजार सेना के साथ महाराणा गागरोन के राजा की सहायता के लिए पहुँचे थे। इस युद्ध में सुलतान महमूद बुरी तरह घायल हुआ। उसे उठाकर महाराणा ने अपने तम्बू पहुँचवा कर उसके घावो का इलाज करवाया। फिर उसे तीन महीने तक चितौड़ में कैद रखा और बाद में फ़ौज खर्च लेकर एक हजार राजपूत के साथ माण्डू पहुँचा दिया। सुल्तान ने भी अधीनता के चिन्हस्वरूप महाराणा को रत्नजड़ित मुकुट तथा सोने की कमरपेटी भेंट स्वरूप दिए जो सुल्तान हुशंग के समय से राज्यचिन्ह के रूप में वहाँ के सुल्तानों के काम आया करते थे। बाबर बादशाह से सामना करने से पहले भी राणा सांगा ने 18 बार बड़ी बड़ी लड़ाईयाँ दिल्ली व् मालवा के सुल्तानों के साथ लड़ी। एक बार विक्रमी 1576 में मालवे के सुल्तान महमूद द्वितीय को महाराणा सांगा ने युद्ध में पकड़ लिया परन्तु बाद में बिना कुछ लिये उसे छोड़ दिया।

मीरा बाई से सम्बंध

महाराणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र का नाम भोजराज था। इनका विवाह मेड़ता के राव वीरमदेव के छोटे भाई रतनसिंह की पुत्री मीराबाई के साथ हुआ था। मीराबाई मेड़ता के राव दूदा के चतुर्थ पुत्र रतनसिंह की इकलौती पुत्री थी।

बाल्यावस्था में ही उसकी माँ का देहांत हो जाने से मीराबाई को राव दूदा ने अपने पास बुला लिया और वही उसका लालन–पालन हुआ।

मीराबाई का विवाह विक्रमी 1573 (सन् 1516) में महाराणा सांगा के कुँवर भोजराज के

साथ होने के कुछ वर्षों बाद कुँवर युवराज भोजराज का देहांत हो गया। मीराबाई बचपन से ही भगवान की भक्ति में रूचि रखती थी। उनका पिता रत्नसिंह, राणा सांगा और बाबर की लड़ाई में, मारा गया। महाराणा सांगा की मृत्यु के बाद छोटा पुत्र रतनसिंह उत्तराधिकारी बना और उसकी भी विक्रमी सम्वत् 1588 (ईसा सन् 1531) में मृत्यु के बाद विक्रमादित्य मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। मीराबाई की अपूर्व भक्ति और भजनों की ख्याति दूर–दूर तक फैल गयी थी जिससे दूर–दूर से साधु संत उससे मिलने आया करते थे। इसी कारण महाराणा विक्रमादित्य उससे अप्रसन्न रहा करते थे और उन्हें तरह–तरह के कष्ट दिया करते थे। यहाँ तक की उसने मीराबाई को मरवाने के लिए विष तक देने के प्रयोग भी किये परन्तु वे निष्फल ही हुए। ऐसी स्थिति देख राव विरमदेव ने मीराबाई को मेड़ता बुला लिया। जब जोधपुर के राव मालदेव ने वीरमदेव से मेड़ता छीन लिया तब मीराबाई तीर्थयात्रा पर चली गई और द्वारकापुरी में जाकर रहने लगी। जहा विक्रम सम्वत् 1603 (ईसा सन् 1546) में उनका देहांत हुआ।

खानवा का युद्ध

बाबर सम्पूर्ण भारत को रौंदना चाहता था जबकि राणा सांगा तुर्क–अफगान राज्य के खण्डहरों के अवशेषों पर एक हिन्दू राज्य की स्थापना करना चाहता थे। इसके परिणामस्वरूप दोनों सेनाओं के मध्य 17 मार्च, 1527 ई. को खानवा में युद्ध आरम्भ हुआ।

इस युद्ध में राणा सांगा का साथ महमूद लोदी दे रहे थे। युद्ध में राणा के संयुक्त मोर्चे की खबर से बाबर के सैनिकों का मनोबल गिरने लगा। बाबर ने अपने सैनिकों के उत्साह को बढ़ाने के लिए उनके शराब पीने और बेचने पर प्रतिबन्ध की घोषणा कर शराब के सभी पात्रों को तुड़वा दिया और उनसे शराब न पीने की कसम ली। उसने मुसलमानों से 'तमगा कर' न लेने की घोषणा की। तमगा एक प्रकार का व्यापारिक कर था जिसे राज्य द्वारा लगाया जाता था। इस तरह खानवा के युद्ध में पानीपत युद्ध की रणनीति का उपयोग करते हुए बाबर ने सांगा के विरुद्ध सफलता प्राप्त की। युद्ध क्षेत्र में राणा सांगा घायल हुए पर किसी तरह वह अपने सहयोगियों द्वारा बचा लिए गये। कालान्तर में अपने किसी सामन्त द्वारा विष दिये जाने के कारण राणा सांगा की मृत्यु हो गई। खानवा के युद्ध को जीतने के बाद बाबर ने 'ग़ाजी' की उपाधि धारण की।

राणा सांगा की मृत्यु

खानवा के युद्ध मे राणा सांगा के चेहरे पर एक तीर आकर लगा जिससे राणा मूर्छित हो गए। परिस्थिति को समझते हुए उनके किसी विश्वासपात्र ने उन्हें मूर्छित अवस्था मे रणभूमि से दूर भिजवा दिया एवं खुद उनका मुकुट पहनकर युद्ध किया। युद्ध मे उसे भी वीरगति मिली एवं राणा की सेना भी युद्ध हार गई। युद्ध जीतने की बाद बाबर ने मेवाड़ी सेना के कटे सिरों की मीनार बनवाई थी। जब राणा को होश आने के बाद यह बात पता चली तो वो बहुत क्रोधित हुए। उन्होंने कहा कि मैं हारकर चित्तोड़ वापस नही जाऊंगा। उन्होंने अपनी बची–खुची सेना को एकत्रित किया और फिर से आक्रमण करने की योजना बनाने लगे। इसी बीच उनके किसी विश्वासपात्र ने उनके भोजन में विष मिला दिया जिससे उनकी मृत्यु हो गई। ऐसा लगता है कि विष देने वाला व्यक्ति किसी लोभ व भय के कारण शत्रु सेना से मिला रहा होगा।

हेमंत और शिशिर ऋतु में आहार-विहार का शरीर पर प्रभाव

—डॉ० भगवान दाश

इन ऋतुओं में पाचन—शक्ति भी बहुत अच्छी होती है। अतः भारी और अधिक मात्रा में भोजन करने पर भी शीघ्र ही पच जाता है। वैसे भी ठंड के कारण शरीर के तापमान को बनाए रखने के लिए अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इसके लिए चिकने और मात्रा में कुछ अधिक पदार्थ खाने पड़ते हैं। यदि शरीर को पूरी मात्रा में भोजन न मिले, तो पाचक अग्नि भोजन रुपी ईंधन न मिलने पर शरीर के पोषक तत्वों पर ही बुरा प्रभाव डालने लगती है। इससे शरीर में वायु दोष बढ़ने लगता है। वैसे इस ऋतु में ठंड अधिक होने के कारण तथा अन्न, औषधि—द्रव्यों, वायु और जल में ठंडक, भारीपन स्निग्धता (चिकनाहट) और मधुर विपाक के कारण शरीर में कफ का संचय होने लगता है। कफ प्रकृति व्यक्तियों में कफ के रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

पथ्य आहार—विहार

इन सब विशेषताओं को देखते हुए उन ऋतुओं में चिकने, मधुर, अम्ल और लवणवाले पदार्थों का सेवन करना चाहिए। भोजन में गेहूँ, नए चावल, पिट्ठी से बने पदार्थ, नया अन्न, वसायुक्त भोजन, घी, तेल, दूध खासकर गाय का दूध, दही, गुड़, मिश्री, चीनी, रबडी, मलाई व खोआ से बने पदार्थों को खाना चाहिए। दालों में चना, उड़द, मसूर एवं राजमा का सेवन किया जा सकता है। सब्जियों में—आलू, गोभी, पत्तागोभी, मटर, नींबू, जिमीकंद व सरसों, बथुआ तथा मेथी का साग लाभकारी हैं। तिल और तिल से बने पदार्थ, गर्म भोजन के साथ अदरक, घी व सेंधा नमक मिलाकर बनाई गई मूँग की दाल, नए चावलों की खिचड़ी व पुलाव आदि स्वादिष्ट होने के साथ—साथ हितकारी भी हैं। शहद एवं मीठा और गर्म दूध भी हितकारी हैं। फलों में सेब, संतरा, पपीता, अमरुद, किन्नु आदि लिए जा सकते हैं।

इस ऋतु में व्यायाम विशेष रुप से लाभ पहुँचाता है। इससे शरीर अधिक बलवान, पुष्ट, चुस्त व मजबूत बनता है। तिल या सरसों के तेल की मालिश लाभदायक है। इससे कफ कम मात्रा में एकत्र होता है। मालिश के बाद व्यायाम करके कुछ देर बाद गुनगुने पानी से नहाना चाहिए। जेंताक विधि से स्वेदन (सिकाई) करना चाहिए।

इस मौसम में इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि वाहन, बैठने व सोने का स्थान अच्छी तरह से व गर्म कपडों से ढके रहें। शरीर पर रंगीन, भारी, ऊनी, रेशमी व गर्म वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। कंबल, रजाई और गद्दों का प्रयोग करना चाहिए। सुबह, शाम और रात को बाहर निकलते समय सिर को गरम टोपी से और कानों को मफलर से ढकना चाहिए। सोते समय रजाई व कंबल औढ़ना चाहिए। तहखानों अथवा घर के गर्म स्थानों में निवास करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर हीटर या एयर कंडीशनर का प्रयोग धूप अथवा आग सेकना लाभकारी है। धूप पीठ की ओर से तथा आग मुख की ओर से सेकनी चाहिए। अधिक व ठंडी हवा हानिकारक है। शरीर पर अगरु का लेप करना चाहिए।

अपवथ्य

इस ऋतु में कड़वे, कसैले, चरेपरे, ठंडे, हल्के और वायु बढाने वाले पदार्थों और पेय—पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। बर्फ, आइसक्रीम, कुल्फी, सत्तू, रुखा भोजन, उपवास या कम मात्रा में भोजन करना, मोठ और आलू का अधिक मात्रा में सेवन भी हानि पहुँचाते हैं।

शिशिर और हेमंत ऋतुएं प्रायः एक जैसी होती हैं। दोनों में ठंडक अधिक होती है। एक अंतर यही है कि शिशिर ऋतु में आदान के कारण वातावरण में रुखापन होता है तथा बादलों, हवा और वर्षा के कारण सर्दी होती है। जबकि हेमंत ऋतु में नमी अधिक होती है। अतः दोनों में एक जैसे खान—पान और व्यवहार का आचरण करना चाहिए। ऊपर लिखे गये आचरण करने से मनुष्य रोगों से बचा रहता है और दीर्घ आयु प्राप्त करता है।

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

नालापानी, देहरादून - 248008, दूरभाष: 0135-2787001

ग्रीष्मोत्सव (यजुर्वेद यज्ञ एवं योग साधना शिविर)
बैशाख शुक्ल पक्ष एकादशी से ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष एकम् विक्रमी सम्वत् 2076 तक
तद्नुसार बुधवार 15 मई से रविवार 19 मई 2019 तक मनाया जायेगा।

योग साधना निदेशक एवं यज्ञ के ब्रह्मा- स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी सरस्वती

प्रवचनकर्ता	:	आचार्य उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
वेद पाठ	:	श्रीमद् दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल पौंधा, देहरादून के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ एवं अन्य कार्यक्रमों के संयोजक	:	श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी, हरिद्वार एवं डॉ. अनिल आर्य, नई दिल्ली
यज्ञ के व्यवस्थापक	:	पंडित सूरतराम शर्मा जी
भजनोपदेशक	:	पंडित सत्यपाल पथिक, श्री रुवेल सिंह आर्यवीर एवं पंडित उम्मेद सिंह विशारद

बुधवार 15 मई से रविवार 19 मई 2019 तक प्रतिदिन

योग साधना	:	प्रात: 5.00 बजे से 6.00 बजे तक
संध्या एवं यज्ञ	:	प्रात: 6.30 बजे से 8.30 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	प्रात: 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
यज्ञ एवं संध्या	:	सायं 3.30 बजे से 6.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	रात्रि 7.30 बजे से 9.30 बजे तक

ध्वजारोहण	- बुधवार 15 मई 2019 को प्रात: 9:00 बजे।
तपोवन विद्यानिकेतन का वार्षिकोत्सव	- बुधवार 15 मई 2019 को प्रात: 10 से 12 बजे तक
युवा सम्मेलन	- गुरूवार 16 मई 2019 को प्रात: 10:00 बजे से 1:00 बजे तक
उद्‌बोधन	- आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य एवं आचार्य डॉ. धनन्जय जी
महिला सम्मेलन	- शुक्रवार 17 मई 2019 को प्रात: 10:00 बजे से 1:00 बजे तक
संयोजिका	- श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा
उद्‌बोधन	- डॉ. अन्नपूर्णा, डॉ. सुखदा सोलंकी, श्रीमती बृजबाला यति एवं श्रीमती सरोज आर्या जी आदि
शोभायात्रा	- शनिवार 18 मई 2019 को प्रात: 10 बजे तपोभूमि के लिये शोभायात्रा जायेगी
संयोजक	- श्री मंजीत सिंह जी
भजन संध्या	- शनिवार 18 मई 2019 को रात्रि 8 बजे से 10 बजे तक
भजनोपदेशक	- श्री सत्यपाल पथिक, श्रीमती मीनाक्षी पंवार एवं मास्टर उत्कर्ष अग्रवाल
स्वामी दीक्षानन्द स्मृति समारोह	- रविवार 19 मई 2019 को पूर्णाहुति के उपरान्त स्वामी दीक्षानन्द स्मृति समारोह मनाया जायेगा जिसमें दिल्ली के आर्यजन भारी संख्या में सम्मिलित होंगे तत्पश्चात ऋषिलंगर का आयोजन है।

नोट : यज्ञ के अतिरिक्त समस्त कार्यक्रम महात्मा प्रभु आश्रित सत्संग भवन में सम्पन्न होंगे।

बस सेवा: रेलवे स्टेशन से तपोवन आश्रम नालापानी के लिए हर समय बस उपलब्ध रहती है।

सप्रेम आमंत्रण

आदरणीय महोदय/महोदया, स्व. बाबा गुरुमुख सिंह जी एवं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी, स्वामी योगेश्वरानन्द जी परमहंस एवं महात्मा प्रभु आश्रित जी ने तपोवन आश्रम को साधना के लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना था। आपसे प्रार्थना है कि परिवार व ईष्ट मित्रों सहित यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित होकर हमें कृतार्थ करें एवं अपने-अपने समाज/धार्मिक सत्संगों से यह निमंत्रण हमारी ओर से निवेदित करने की कृपा करें। आपके उदार सहयोग के लिए अग्रिम धन्यवाद।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, विनीश आहूजा, स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी, सुधीर कुमार माटा, मंजीत सिंह, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, अशोक वर्मा, महेन्द्र सिंह चौहान, योगराज अरोड़ा, विजय कुमार, रामभज मदान।

एवं समस्त सदस्य, वैदिक साधन आश्रम सोसायटी

Delite
KOM
freedom to work...
Delite Kom Limited
All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary:
Any infringement is liable for prosecution.
Delite
KOM
DELITE KOM LIMITED
Kukreja House, IInd Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055
Ph. : 011-46287777, 23530288, 23530290, 23611811 Fax : 23620502 Email : delite@delitekom.com
DNV

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com